इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय
मानविकी विद्यापीठ

BHDC-133
आधुनिक हिंदी कविता

खंड

3
काव्यवाचन और विश्लेषण

इकाई 12
काव्य वाचन और विश्लेषण : भारतेन्दु हरिश्चंद्र और अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध' 305

इकाई 13
काव्य वाचन और विश्लेषण : मैथिलीशरण गुप्त, रामनरेश त्रिपाठी 320

इकाई 14
काव्य वाचन एवं विश्लेषण : जयशंकर प्रसाद 340

इकाई 15
काव्य वाचन एवं विश्लेषण : सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला' 354

इकाई 16
काव्य वाचन एवं विश्लेषण : सुमित्रानंदन पंत 370

इकाई 17
काव्य वाचन एवं विश्लेषण : महादेवी वर्मा 386

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

खंड 3 का परिचय

'आधुनिक हिंदी कविता' पाठ्यक्रम का यह तीसरा खंड है। पूर्व के दो खंडों में आपने आधुनिक हिंदी कविता के विकास क्रम, प्रमुख कवियों की काव्यगत विशेषताओं और उनके काव्य जगत के अन्य आयामों का गंभीरता पूर्वक अध्ययन किया है। इस अध्ययन से आपके मन में इन कवियों की उद्धृत कविताओं के अतिरिक्त अन्य कविताओं को पढ़ने-समझने की इच्छा पैदा होना स्वाभाविक है। यह खंड पाठ्यक्रम में निर्धारित कवियों की चयनित कविताओं की व्याख्या पर आधारित है। इसमें आप इकाईवार निर्धारित कवियों की चयनित कविताओं के वाचन और विश्लेषण का अध्ययन करेंगे। खंड की पहली इकाई भारतेंदु हरिश्चंद्र और अयोध्या सिंह उपाध्याय की कविताओं के वाचन-विश्लेषण पर केंद्रित है। दूसरी इकाई में आप मैथिलीशरण गुप्त और रामनरेश त्रिपाठी की चयनित कविताओं का अध्ययन करेंगे आगे की चार इकाइयों में छायावादी चतुष्टय के कवि जयशंकर प्रसाद, सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला', सुमित्रानंदन पंत और महादेवी वर्मा की चयनित कविताओं का पाठ और विश्लेषण किया गया है।

हमें विश्वास है कि इन इकाइयों के अध्ययन के उपरांत आप इन कविताओं की सप्रसंग व्याख्या करने में समर्थ हो सकेंगे ।

शुभकामनाओं के साथ ।

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

इकाई 12 काव्य वाचन और विश्लेषण : भारतेन्दु हरिश्चंद्र और अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध'

इकाई की रूपरेखा

12.0 उद्देश्य

12.1 प्रस्तावना

12.2 भारतेन्दु हरिश्चन्द्र की चयनित कविताओं की व्याख्या

12.3 प्रिय प्रवास के चयनित अंशों की व्याख्या
12.3.1 प्रिय प्रवास का उद्देश्य

12.4 सारांश

12.5 उपयोगी पुस्तकें

12.0 उद्देश्य

भारतेन्दु हरिश्चंद्र के नाम पर आधुनिक हिंदी साहित्य के पहले चरण का नाम 'भारतेन्दु युग' रखा गया है। इससे भारतेन्दु की महत्ता सर्वस्वीकृत है। हिंदी भाषा और साहित्य दोनों पर भारतेन्दु के सर्वाधिक प्रभाव को साहित्य के इतिहासकारों ने स्वीकारा है। इसी तरह अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध' भी आधुनिक हिंदी कविता के एक महत्वपूर्ण कवि हैं। दोनों कवियों के रचना-संसार से हिंदी काव्य समृद्ध हुआ है। इस इकाई में आप दोनों कवियों की काव्यकृतियों के चयनित अंशों का पाठ करेंगे। इस इकाई को पढ़ने के बाद आप उल्लिखित कवियों की कविताओं की भाव-भूमि से परिचित हो सकेंगेः

- इन कविताओं के आधार पर कवियों के देशप्रेम की भावना के संबंध में अवगत हो सकेंगे;
- कविताओं का रसास्वादन कर सकेंगे;
- कवियों की भाषिक विशेषताएँ समझ सकेंगे;
- इन कविताओं के माध्यम से कवि की चिंताओं की चर्चा कर सकेंगे;
- इन कविताओं के काव्य-सौष्ठव का स्वरूप जान सकेंगे।

12.1 प्रस्तावना

भारतेन्दु हरिश्चंद्र (1850-1885) बहुमुखी प्रतिभासम्पन्न साहित्यकार हैं। उन्होने कविता के क्षेत्र में अपनी कवि प्रतिभा का परिचय दिया है। साथ ही, आधुनिक हिंदी गद्य के निर्माता के रूप में उनकी प्रसिद्धि रही है। उनके प्रयास और प्रेरणा के फलस्वरूप गद्य की विविध विधाओं-नाटक, निबंध, आलोचना, उपन्यास, यात्रा-वृत्त आदि का श्रीगणेश हुआ। हिंदी पत्रकारिता के क्षेत्र में भी उन्होने प्रतिमान स्थापित किए। उनकी काव्य कृतियों की संख्या लगभग सत्तर हैं। इनमें 'प्रेम मालिका', 'प्रेम फुलवारी', 'प्रेम सरोवर', 'विनय प्रेम पचासा', 'गीत गोविंदानंद', 'वर्षा-विनोद', 'वेणु गीति' आदि विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। भारतेन्दु की कविताओं के विषय विविध हैं। भक्ति, श्रृंगारिकता, देश-प्रेम, सामाजिक परिवेश,

प्रकृति आदि विभिन्न संदर्भों पर आधारित इनकी कविताओं में एक ओर प्राचीन काव्य परंपरा का पालन किया गया है तो दूसरी ओर नवीन चेतना और आधुनिक काव्यधारा का प्रवर्तन हुआ है। राजभक्ति, देशभक्ति, दास्यभाव और माधुर्य भाव आदि के चित्रण भी मिलते हैं। अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध' (1865-1947) द्विवेदी युग के प्रतिनिधि कवि हैं। उन्होने कविता, उपन्यास, निबंध और आलोचना के क्षेत्र में अपनी प्रतिभा का परिचय दिया है लेकिन 'हरिऔध' जी को कवि के रूप में सर्वाधिक ख्याति प्राप्त हुई है। उनकी काव्य कृतियों में 'प्रियप्रवास' का मुख्य स्थान है। इसे खड़ी बोली का प्रथम महाकाव्य माना गया है। इनकी अपूर्व साहित्य-सेवा के कारण ही हिंदी साहित्य में इन्हें 'कवि सम्राट' के रूप में स्मरण किया जाता है। कवि की अन्य रचनाओं में 'रसकलस','चुभते चौपद', 'चोखे चौपदे' और 'पारिजात' उल्लेखनीय हैं। इस कवि के काव्य में विभिन्न विषयों को स्थान प्राप्त हुआ है, जिनमें भक्ति, नीति और प्रकृति मुख्य हैं। भक्ति काव्य के अतिरिक्त उन्होने नीति की भी रचनाएँ की हैं। गद्य और पद्य दोनों क्षेत्रों में हरिऔध जी की गति एक-जैसी है। भारतेन्दु जी की तरह हरिऔध जी ने भी ब्रजभाषा और खड़ी बोली में कविता सृजन किया है। 'रसकलस' की भाषा ब्रजभाषा है। कविता के क्षेत्र में उन्हें खड़ी बोली का संस्थापक कवि कहा जाता है। उनके काव्य में द्विवेदी-युग की सभी प्रवृत्तियाँ परिलक्षित होती हैं।

12.2 भारतेन्दु हरिश्चन्द्र की चयनित कविताओं की व्याख्या

(काव्य वाचन तथा संदर्भ सहित व्याख्या)

एक

नैना वह छवि नाहिन भूलै।
दया भरी चहुँ दिसि की चितवनि नैन कमल दल फूले।
वह आवनि वह हंसनि छबीली वह मुस्कनि चित चोरै।
वह बतरानि मुरलि हरि की वह देखन चहूँ कोरे।
वह धीरी गति कमल फिरावन कर लै गायन पाछै।
वह बीरी मुख वेनु बजावति पीत पिछौरी काछे।
पर बस भए फिरत है नैना एक छन टरत न टारे।
''हरीचंद'' ऐसी छवि निरखत तन मन धन सब हारे।

संदर्भ और प्रसंग :

भारतेन्दु हरिश्चंद्र की काव्य-कृति 'प्रेम-मालिका' (प्रकाशन वर्ष 1871 ई.) से उपरोक्त पद अवतरित किया गया है। 'प्रेम-मालिका' में यह पद कीर्तन शीर्शक के अंतर्गत है। कवि द्वारा रचित कीर्तनों के संग्रह को 'प्रेम-मालिका' के नाम से जाना जाता है। भारतेन्दु को वैष्णव भक्ति विरासत में मिली। सामाजिक सरोकार की रचनाओं के साथ उनकी भक्तिपरक रचनाओं की बहुत बड़ी संख्या है। भारतेन्दु की रचनाओं में भक्ति एवं रीति कालीन काव्य प्रवृत्तियों का प्रभाव पाया जाता है।

व्याख्या :

भारतेन्दु ने अवतरित पद में कृष्ण के रूप-सौन्दर्य का चित्रण किया है। कवि ने कहा है कि भक्त के नेत्रों के मार्ग से हृदय में मनोहर कृष्ण आ बसे हैं। वह दिन-रात उस कृपापूर्ण दृष्टि का ही स्मरण करता है जिसका सौन्दर्य याचक अथवा देखने वाले के नेत्रों को तृप्त कर देता है। कृष्ण की चंचल चितवन हंसी और मुसकराकर नेत्रों की कोर से चारों ओर देख लेने की सुंदर छवि चित्त को चुराने वाली है। हँस-हँस कर बातें करते हुए कृष्ण जब हाथों में कमल फूल धीरे-धीरे फिराते हैं भला उस श्याम को कौन विस्मृत कर सकता है। अपने ओष्ठों को अर्द्ध गोलाकार आकृति दे कर बांसुरी

शब्दार्थः

नाहिन-नहीं, चहुं- चारों ओर, चित चोरै-दिल चुराने वाले, बतरानि-बात करने की इच्छा, पिछौरी-पीछे की ओर, निरखत-देखकर

बजाते श्याम की छटा का दर्शन जिसे मिल जाए वह अपनी दृष्टि उनसे फिरा नहीं सकता। पीले वस्त्र धारण करने वाले कृष्ण के सौन्दर्य ने देखने वाले के नेत्रों को दास बना लिया है। कवि 'हरीचंद' (हरिश्चंद्र) कहते हैं कि ऐसे मनोहर कृष्ण को टकटकी लगाकर देखने में परम सुख है। कृष्ण के इस सौन्दर्य पर मेरा तन, मन, धन यानी सर्वस्व न्योछावर है।

विशेष :

1. अवतरित पद में कवि का कृष्ण प्रेम व्यक्त हुआ है। कृष्ण के अपरूप सौन्दर्य चित्रण के बहाने अपनी भक्तिभावना का परिचय प्रस्तुत किया है। इस पद से गुजर कर पाठकों को सूरदास के कृष्ण का सौन्दर्य चित्रण स्मरण हो आना स्वाभाविक है।
2. सरल, सहज और प्रवाहमयी ब्रजभाषा का सुंदर प्रयोग किया गया है।
3. यह पद राग गौरी में रचित है। अतः गेयात्मकता की -दृष्टि से पद का महत्व है।

दो

तुम्है तो पतितन ही सों प्रीति।
लोकरु बेद विरूद्ध चलाई क्यों यह उलटी रीति।
सब विधि जनत हो निश्चय करि तुमसों छिप्यौ न नेक।
बेद-पुरान प्रभाव तजन को मेरो यह अविवेक।
महा पतित सब धर्म बिवर्जित श्रुतिनिंदक अध-खान।
मरजादा ते रहित मनस्वी मानत कहु न प्रभान।
जानत भए अजान काहे क्यों रहे तेल दै कान।
तुम्हें छोड़ि जग को नहिं जो मोहि विगर्यो करत बखान।
बलिहारी यह रीझि शबरी कहाँ खुटानी आय।
'हरिचंद' सो नेप निबाहत हरि कहु कही न आय।

संदर्भ और प्रसंग : पूर्ववत

व्याख्या :

भक्ति के इस पद में हम भक्त की उलाहनाएँ देख सकते हैं। भारतेन्दु कृष्ण से शिकायत करते हैं कि आपको तो पतितों से प्रेम है फिर लोक और वेद के विरुद्ध चल रही उल्टी रीति पर आपका ध्यान कैसे नहीं है। आप पतितों के कृपालु हैं। आप सर्व ज्ञाता ईश्वर हैं, आपसे कुछ छिपा भी तो नहीं हैं। आप पतितों के उद्धारक हैं। इन पतितों में स्वयं को सम्मिलित करते हुए भारतेन्दु कहते हैं कि वेद, पुराण आदि त्याग देने वाले अविवेकी महापतितों की कोटि में आते हैं। प्राचीन ज्ञान के भंडार श्रुतियों की निंदा करने वाले पापी मर्यादाविहीन हैं। सभी धर्मों से विरत हैं। ऐसे अधम मनस्वी कहला रहे हैं। कवि का निवेदन है कि हे प्रभु आप सब कुछ जानते हुए भी अनजान बने हुए हैं। आपके इस प्रकार प्रतिक्रिया विहीन होकर बैठे रहने से मेरा क्या होगा, जबकि आपके अतिरिक्त मेरी बिगड़ी को बनानेवाला और कोई है ही नहीं। आप मुझ पर कृपा कीजिए। आपकी इस कृपा पर मैं न्यौछावर हूँ। 'हरिचंद' जैसे अधम पर हरिकृपा का बखान नहीं किया जा सकता।

शब्दार्थ :

लोक-लोक के, जानत-जानते हो, ताजन-छोडकर, मरजादा-मर्यादा, अंजान-अनजान

विशेष :

1. यह पद दास्य भाव का है। कवि की दीनता का वर्णन है। गोस्वामी तुलसीदास की भक्ति भावना का प्रभाव इस पद में देखा जा सकता है। साथ ही बिहारीलाल की भक्ति का प्रभाव "कौन भांति रहिए बिरदु ---" का भी प्रभाव परिलक्षित किया जा सकता है।
2. कवि का कृष्ण के प्रति एकनिष्ठ प्रेम अभिव्यक्त हुआ है।
3. चलती ब्रजभाषा को साहित्यिक ब्रजभाषा का रूप प्रदान किया गया है।
4. यह पद राग सारंग में है अतः गेयात्मक है।

तीन

रहै क्यों एक म्यान असि दोय।
जिन नैनन में हरि रस छायो तेहि क्यों भाखै कोय।
जा तन-मन मैं रति रहे मोहन तहाँ ग्यान का आवै।
चाहो जितनी बात प्रबोधो ह्याँ को जो पति आवै।
अमृत खाइ अब देखि इनारून को मूरख जो भूले।
'हरिचंद' ब्रज ले कटली बन काटौ तो फिरि फूलै।

संदर्भ और प्रसंग :

भारतेन्दु हरिश्चंद्र विरचित 'प्रेम फुलवारी' (1883 ई) में संकलित इस पद में एक ओर जहां भक्ति कालीन कवियों की भक्तिधारा का प्रतिबिंब मिलता है, वहीं रीतिकालीन प्रवृत्ति का पुट भी परिलक्षित होता है। अंतर यह है कि इनमें रीतिकालीन काव्य के समान ऊहात्मक वर्णन नहीं है। इस छोटे से काव्य-संग्रह के समर्पण में कवि ने कृष्ण को बड़ा सैलानी कहा है। नदियों के तट पर पर्यटन करने वाले श्रीकृष्ण से कवि का आग्रह है वे कभी उसकी प्रेम फुलवारी में आ जाएँ तो जीवन धन्य हो जाएगा। इस पद में कवि ने प्रेम का बड़ा ही स्वाभाविक वर्णन किया है।

व्याख्या :

भारतेन्दु कहते हैं कि यह तन-मन केवल मोहन को समर्पित है। इसमें किसी दूसरे के लिए कोई स्थान नहीं है। जब यह पूर्णतया निश्चित हो चुका है तो एक म्यान में दो तलवारें कैसे रह सकती हैं ? जिन नैनों में हरि की छवि बस गई है, उसमें दूसरे की छवि नहीं समा सकती। जिस तन-मन में श्याम समा गए हों वहाँ ज्ञान के लिए जगह नहीं। अर्थात जिस हृदय में मोहन की भक्ति बसी हो वहाँ ज्ञान का क्या काम? इस संबंध में गुणीजन चाहें जितना समझाएँ कवि समझने के लिए तैयार नहीं है क्योंकि भक्ति श्रद्धा के वशीभूत है। ज्ञान से भक्ति नहीं होती। अर्थात, ज्ञान कभी भी भक्ति का स्थान ले नहीं सकता। हृदय पक्ष पर बुद्धि पक्ष हावी नहीं हो सकता। चाहे कितनी ही बातों पर विश्वास हो जाये लेकिन यह कैसे माना जा सकता है कि अमृत को छोड़कर कोई विष की चाह कर रहा है। ऐसा तो कोई मूर्ख ही कर सकता है। भारतेन्दु कहते हैं यानि राधा या नायिका कहती है कि जिस प्रकार केले के वृक्ष को जितना काटे जाओ, वह उतना ही फैलता है, उसी प्रकार श्याम का प्रेम है। इस प्रेम को जितना भी दूर करने का प्रयास किया जाएगा उतना ही वह बढ़ता जाएगा।

विशेष :

1. इस पद में प्रेम की महत्ता स्थापित की गई है।
2. इस पद के वाचन से हमें सूर की रचना की याद आती है। जिस प्रकार गोपियाँ उद्धव से प्रेम की व्याख्या करती हैं और अपने तर्कपूर्ण उत्तर से उद्धव के ज्ञान और योग मार्ग का खंडन करती हैं, उसी प्रकार का भाव इस पद में समाहित है।

3. ब्रजभाषा का सुंदर प्रयोग मिलता है।

4. रीतिकालीन कवियों के समान इस पद में प्रेम का ऊहात्मक वर्णन नहीं है।

चार

प्रेम में मीन मेष कछूँ नाहिं।
अति ही सरल पंथ यह सूधो छल नहिं जाके माही।
हिंसा द्वेष इरखा मत्सर मद स्वारथ की बातै।
कबहूँ याके निकट न आवै छल प्रपंच की धातै।
सहज सुभाविक रहनि प्रेम की प्रीतम सुख सुखकारी।
अपुनो कोटि कोटि सुख पिय के तिनकहि पर बलिहारी।
जहँ ने ज्ञान अभिमान नेम ब्रत विशय- वासना आवै।
रीझ खीज दोऊ पीतम की मन आनंद बढ़ावै।
परमारथ स्वारथ दोऊ पीतम और जगत नहिं जाने।
हरिश्चंद यह प्रेम-रीति कोउ विरले ही पहिचाने।

संदर्भ और प्रसंग :

भारतेन्दु कृत 'विनय प्रेम पचासा' (1881 ई.) से अवतरित अंश लिया गया है। इस पद में प्रेम की सरलता और निश्छलता पर प्रकाश डाला गया है। इसमें प्रेम की शुद्धता की व्याख्या की गई है। सच्चे प्रेम की परिभाषा भी इस पद में प्रस्तुत की गई है।

व्याख्या :

प्रेम में न कोई खोट निकाली जाती है और न कोई दोष ढूंढा जाता है। इसमें छल -कपट आदि का कोई स्थान नहीं है। इसका मार्ग अत्यंत सरल होता है। हिंसा, ईर्ष्या, द्वेष, दुर्भावना और अहंकार का भी प्रेम-मार्ग में कोई स्थान नहीं है। प्रेम सहज है और हिंसा, द्वेष आदि से उसका कोई संबंध नहीं होता है। स्वाभाविकता और नैसर्गिकता प्रेम की विशेषताएँ प्रीतम के लिए परम सुखदायी हैं। प्रिय के छोटे-से सुख के लिए अपने अनगिनत सुखों को न्यौछावर करने वाला ही सच्चा प्रेमी कहलाता है। संसार के सभी प्रपंचों से प्रेम मुक्त होता है। उसमें अभिमान, ज्ञान का बखान, रीति, नियम, व्रत, लोभ, विषय, वासना आदि नहीं होते। प्रियतम पर प्रिया चाहे रीझे या खीझे, हर हाल में प्रेम पलटा है। प्रिया को आनंद प्राप्त होता है। संसार जिस स्वार्थ-परमार्थ के जटिल प्रश्नों से उलझा रहता है,प्रेम उससे अनजान रहता है, अपरिचित होता है। प्रेम अपने जिस आनंद संसार में डूबा है यह जात उससे अनजान है। कवि हरिचन्द को प्रतीत होता है कि इस प्रेम रीति से कोई-कोई ही परिचित हो पाता है बाकी संसार तो अपनी विषय-वासना में लिप्त रहता है।

विशेष :

1. रीति कालीन कवि घनानन्द के निम्नलिखित पद का प्रभाव पाया जाता है -"अति सूधो सनेह को मारग है, जहां नैकु सयानप बांक नहीं।" प्रेमी का अपना कोई सुख नहीं होता। प्रियतम का सुख ही उसका सुख होता है। जहां रंच मात्र का भी छल, कपट, ईर्ष्या, द्वेष आदि भावनाएँ होती हैं, वहाँ प्रेम नहीं होता।

2. प्रेम की दुनिया की विशिष्टताएँ इस पद से स्पष्ट होती हैं।

3. कवित्त छंद में यह पद रचित है।

4. शुद्ध और परिनिष्ठित ब्रजभाषा का प्रयोग किया गया है।

पाँच

मुँह जब लागै तब नहि छूटै।
जाति मान धन सब कुछ लूटै।
पागल करि मोहि करे खराब
क्यों सखि साजन नहीं शराब।

संदर्भ और प्रसंग :

भारतेन्दु का युग परिवर्तन का युग था। तत्कालीन परिस्थितियों ने कवियों में चेतना को प्रसरित किया है। समाज को जगाने के लिए कवियों ने काव्य रचनाएँ कीं। भारतेन्दु सामाजिक बुराइयों को दूर करके देश में नयी स्फूर्ति का संचार करना चाहते थे। उनकी काव्य रचना की प्रवृत्ति में परिवर्तन आया। पारंपरिक प्रवृत्तियों के स्थान पर नयी प्रवृत्तियों ने स्थान पाया। मुकरियों की रचना में इन्हीं प्रवृत्तियों को देखा जा सकता है। 'नए जमाने की मुकरी' से उद्धृत इस मुकरी में कवि ने शराब पीने की बुराइयाँ कीं ओर लोगों का ध्यान आकृष्ट किया है।

व्याख्या:

सखी पहले पहेली पूछती है। फिर स्पष्ट करती है कि शराब ऐसी चीज है जब किसी के मुँह लग जाती है अर्थात जब किसी को इसकी आदत पड़ जाती है तब जाति, मान, मर्यादा, धन सब लूट लेती है। यह व्यक्ति को पागल बना देती है। इसकी आदत पड़ जाने से व्यक्ति का जीवन बर्बाद हो जाता है।

विशेष : मुकरियों की रचना करके भारतेन्दु हरिश्चंद्र जनता में जागृति लाना चाहते थे। शराब पीने से समाज में जो अवनति आ रही थी, उसे दूर करने के लिए कवि ने व्यंग्य भरी मुकरियों की रचनाएँ कीं।

छः

भीतर भीतर सब रस चूसै।
हंसि हंसि के तन मन धन मूँसै।
जाहिर बातन में अति तेज
क्यों सखि साजन नहीं अंग्रेज।

संदर्भ और प्रसंग :

मुकरियों के लेखन से भारतेन्दु का जन-मन में चेतना प्रसरित करना चाहते थे। उनकी मुकरियों ने न केवल पढे-लिखे लोगों में बल्कि अशिक्षितों के बीच भी बहुत ही चर्चित और लोकप्रिय रहीं। भारतेन्दु ने साहित्य की विविध विधाओं के साथ ही मुकरी को भी नया रूप प्रदान किया। उन्होने शुद्ध साहित्यिक मुकरियों को देश की तत्कालीन दशाओं के साथ जोड़ा। अंग्रेजों के शोषण से भरपूर शासन के संबंध में इतने सीधे तौर पर कहने का साहस भारतेन्दु में दिखाई पड़ता है।

व्याख्या :

ऊपर से अत्यंत भद्र और शालीन दिखने वाले अंग्रेजों के लिए भारतेन्दु ने 'नए जमाने की मुकरी' (1884 ई.) में उन्हें चतुर और चालाक कहा है। प्रत्यक्ष रूप में लच्छेदार भाषा में बोलने वाले अंग्रेजों ने इस देश को जी भर कर लूटा। छल-कपट और धोखे से इस देश को कंगाल बनाकर उन्होने अपने को धन-धान्य से समृद्ध किया। भारत को उन्होंने हर

स्तर पर क्षति पहुंचाई है। लूट और दमन अंग्रेजों के अस्त्र रहे हैं। भारतेन्दु ने उसका खुलासा किया है।

विशेष :

अपने शोषण को छल-कपट और धूर्तता भरी बातों के आवरण में छिपाने वाले अंग्रेजों के वास्तविक चरित्र को इस मुकरी में उद्घाटित किया गया है। जन सामान्य के लिए अत्यंत सुबोध भाषा में भारतेन्दु ने मुकरियाँ लिखी हैं। मुकरियों में निहित व्यंग्य चेतना प्रभावशाली है।

सात

नई नई नित तान सुनावै
अपने जाल में जगत फंसावै ।
नित नित हमै कराई बल सून
क्यों सखि साजन नहीं कानून ।

संदर्भ और प्रसंग :

नये जमाने की मुकरी (1884 ई.) के प्रकाशन से भारतेन्दु के परिपक्व विचार मिलते हैं तथा इसमें जन सामान्य में दूरगामी प्रभाव उत्पन्न करने की शक्ति परिलक्षित होती है। इस मुकरी में अंग्रेजों की कानून व्यवस्था पर व्यंग्य किया गया है।

व्याख्या :

अंग्रेजों द्वारा भारत को लूटने में जिन उपकरणों का प्रयोग हुआ उनमें कानून महत्वपूर्ण था। अंग्रेज शासकों ने इस देश के दोहन के लिए मनचाहे कानून बनाए। इन कानूनों के तहत अपनी सुविधानुसार वे भारतीयों पर लूट की लीला चलाते थे। कहना न होगा कि सारे कानून उनके फायदे के लिए बने थे। अपनी आवश्यकता के अनुसार वे नित नये कानून भी बनाकर भारतीयों को गुलामी के जाल में फँसाते रहते थे। कानून के मकड़जाल में फंसे छटपटाते भारतीयों की पीड़ा को इस मुकरी के माध्यम से अभिव्यक्त किया गया है।

विशेष :

कानून के सहारे अंग्रेज भारतीयों की लूट, दमन और शोषण करते थे जिसका चित्रण इस मुकरी में किया गया है। अंग्रेजों द्वारा प्रवर्तित कानून व्यवस्था पर व्यंग्य किया गया है। भाषा सहज, सरल और सुबोध है।

उद्देश्य

इस अंश में भारतेन्दु की कविताओं की सामान्य प्रवृत्तियों से परिचित कराना और उनकी कविताओं की मूल संवेदना पर विचार करना मुख्य उद्देश्य है। भक्तिकालीन, रीति कालीन और आधुनिक चेतना से सम्पन्न भारतेन्दु की कविता से हिंदी काव्य संसार समृद्ध हुआ है। भारतेन्दु के लिए काव्य केवल कला और मनोरंजन का माध्यम नहीं था, उन्होने इसे जनचेतना को प्रसरित करने का महत्वपूर्ण साधन भी सिद्ध किया। पुनर्जागरण काल में आप भारतेन्दु के अवदान पर विचार कर सकते हैं। इसमें उपरोक्त पदों की महती भूमिका हो सकती है।

बोध प्रश्न-1

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर संक्षेप में दें।

1. भारतेन्दु हरिश्चंद्र की दृष्टि में प्रेम की परिभाषा क्या है ?

.....

.....

.....

2. औपनिवेशिक शासन में भारतेन्दु की मुकरियों की भूमिका स्पष्ट कीजिए।

.....

.....

.....

अभ्यास :

1 भारतेन्दु हरिश्चंद्र की काव्यगत विशेषताओं को सोदाहरण स्पष्ट कीजिए।

12.3 प्रिय प्रवास के चयनित अंशों की व्याख्या

एक

अतः करूंगा यह कार्य मैं स्वयं।
स्व-हस्त में दुर्लभ प्राण को लिय।
स्व-जाति औ जन्म धरा-निमित मैं।
न भीत दूंगा विकराल व्याल से।
सदा करूंगा अपमृत्यु सामना।
स-भीत दूंगा न सुरेन्द्रवज्र से।
कभी करूंगा अवहेलना न मैं।
प्रधान-धर्मांग परोपकारक की।
प्रवाह होते तक शेष श्वास के।
सशक्त होते तक एक लोम के
किया करूंगा हित सर्व-भूत का।
('ग्यारहवें सर्ग' से)

शब्दार्थ :

1) धरा- पृथ्वी 2) निमित- के लिए 3) व्याल- सर्प 4) भीत- डर 5) सुरेन्द्रवज्र- इन्द्र का वज्र

प्रसंग और संदर्भ : 'प्रिय प्रवास' हरिऔध जी की सबसे प्रसिद्ध रचना है। इस रचना के माध्यम से कवि ने समसामयिक समस्याओं को ही स्थान दिया है। यहां हम इस रचना के विभिन्न सर्गों से कुछ उन अंशों का वाचन करेंगे जिनमें कवि ने श्रीकृष्ण के लोकोपकारक तथा समाज सेवी रूप को प्रस्तुत किया है।

व्याख्या :

उद्धव को सुनाते हुए वह वृद्ध ग्वाल कहने लगे कि इसलिए अपने प्राणों को हथेली पर रख कर मैं स्वयं ही यह कार्य करूंगा। अपनी जाति तथा जन्मभूमि के लिए मैं इस भयंकर सर्प से कभी नहीं डरूँगा और निश्चित ही उस सर्प के आतंक से ब्रजवासियों को मुक्त करूंगा।

कवि वर्णन कर रहा है कि मैं सदैव बुरी से बुरी मृत्यु का सामना करूंगा, इंद्र के वज्र से भी भयभीत नहीं होऊँगा। धर्म के प्रधान तत्व परोपकार का मैं कभी भी तिरस्कार नहीं करूंगा। यह इसलिए कि मैं इन्हीं कार्यों को सफल बनाने आया हूँ।

विशेष :

इस अंश में कृष्ण के माध्यम से कवि ने अपनी युगीन समस्याओं की ओर संकेत किया है। कृष्ण के लोकोपकारी रूप को चित्रित किया है। इस अवतरित अंश में संघर्ष चेतना का भी अंकन किया गया है।

भाषा शुद्ध खड़ी बोली और तत्सम प्रधान है।

दो

संसार में सकल-काल नृरत्न ऐसे।
है हो गये अवनि है जिनकी कृतज्ञा।
सारे अपूर्व-गुण हैं उनके बताते।
सच्चे नृरत्न हरि भी इस काल के हैं।
बातें बड़ी सरस के कहते विहारी।
छोटे-बड़े सकल का हित चाहते थे।
अत्यंत प्यार दिखला मिलते सबों से
वे थे सहायक बड़े दुख के दिनों में

• • •

थे राजपुत्र उनमें मद था न तो थी।
वे दीन के सदन थे अधिकांश जाते।
बातें मनोरम सुना दुख जानते थे।
औ थे विमाचन उसे करते कृपा से।
रोगी दुखी विपद-आपद में पड़ों की।
सेवा सदैव करते निज हस्त से थे।
ऐसा निकेत ब्रज में न मुझे दिखाया
कोरे जहां दुखित हो पर वे न होवें। ('बारहवें सर्ग से')

संदर्भ और प्रसंग :

हरिऔध जी की प्रसिद्ध काव्य-कृति 'प्रिय प्रवास' के बारहवें सर्ग से अवतरित अंश लिया गया है। इस अंश में कृष्ण की महानता का गुणगान किया गया है।

व्याख्या :

कवि वर्णन कर रहा है कि संसार में सदैव ऐसे श्रेष्ठ महापुरुष जन्म लेते रहे हैं जिनके परम पवित्र और महान कार्यों से पृथ्वी कृतज्ञ होती आई है। कृष्ण के संपूर्ण अनुपम गुण वही बता सकते हैं कि वे इस युग के महान व्यक्ति हैं और उनके कर्म भी इस बात के सूचक हैं कि भविष्य मे वे अत्यंत महान व्यक्ति बनेंगे और संपूर्ण विश्व सदैव स्मरण किया करता है।

पुनः कवि का कहना है कि कृष्ण ने जो महान कार्य करके दिखाए हैं उन्हें कोई भी व्यक्ति कभी कर नहीं सकता है। कहाँ तो इतने कठिन कार्य और कहाँ उनकी बारह वर्ष की छोटी अवस्था, हे उद्धव जब इस छूती अवस्था में उन्होने ऐसे कार्य कर दिखाये हैं तो फिर क्यों न वे इस युग के महापुरुष होंगे। कहने का आशय यह है कि ऐसे व्यक्ति ही महापुरुष होते हैं।

कवि का कहना है कि कृष्ण अत्यंत मीठी और कर्णप्रिय बातें सुनाया करते थे। वे छोटे-बड़े सबके कल्याण की कामना करते थे। सबसे अत्यंत प्रेमपूर्वक मिलते थे। ब्रजवासियों के दुख से उनका हृदय

शब्दार्थ :

1) सकल- सब 2) नृरत्न- पुरुषों में श्रेष्ठ 3) अवनि - पृथ्वी 4) मद- घमंड 5) दीन- गरीब 6) सदन - घर 7) निकेट - घर

विदीर्ण हो उठता था। उस समय वे सब कुछ भूल जाते थे। दुखी मनुष्य का दुख दूर करने में लग जाते थे। हे उद्धव, हम ऐसे ब्रजरत्न को खोकर कैसे धैर्य धारण कर पाएंगे।

कृष्ण थे तो राजकुमार लेकिन उनमें रंच मात्र का अहंकार न था। वे प्रायः गरीबों के घर जाया करते थे। उनसे अत्यंत मधुर वाणी में उनका दुख पूछा करते थे और फिर अपनी कृपा से उस दुख को दूर करते थे। उनकी रग-रग में पर- सेवा की भावना भरी रहती थी।

कृष्ण सर्वत्र रोगियों तथा विपदाओं से घिरे लोगों की अपने हाथों से सेवा किया करते थे। मैंने ब्रज का एक भी घर ऐसा नहीं देखा जहां पर वे दुखी मनुष्यों के दुख का विनाश करने न गए हों। जहां भी कोई दुखी दिखता था वहाँ वे अवश्य पहुँच जाते थे और अपनी संपूर्ण शक्ति के साथ उसका कष्ट हर लेते थे।

विशेष :

कृष्ण को महापुरुष के रूप में चित्रित किया गया है। उनके परोपकारी, सेवा-भाव, निरहंकारी, मृदुभाषी, जनकल्याणकारी आदि रूपों का चित्रण किया गया है। भाषा शुद्ध खड़ी बोली और तत्सम प्रधान है।

तीन

तदपि चित्त बना है श्याम का चारू ऐसा।
वह निज-सुहृदों, से थे स्वयं हार खाते।
वह कतिपय जीते खेल को थे जिताते।
सफलित करने को बालकों में उमंगे।

• • •

चरित्र ऐसा उनका विचित्र है।
प्रविष्ट होती जिसमें न बुद्धि है।
सदा बनाती मन को विमुग्ध है।
अलौलिक लोकमयी गुणावली।

('तेरहवें सर्ग से')

शब्दार्थ :

1)चित्त- हृदय 2) श्याम- श्रीकृष्ण 3) चारू - सुंदर 4) प्रविष्ट- प्रवेश

प्रसंग और संदर्भ : अयोध्या सिंह उपाध्याय हरिऔध के काव्य 'प्रिय प्रवास' के तेरहवें सर्ग से अवतरित इस अंश में कवि ने कहा है कि कृष्ण विराट हृदय के थे।

व्याख्या :

बड़े से बड़े कुशल खिलाड़ी भी कृष्ण से जीत नहीं सकता था, लेकिन कृष्ण का चित्त इतना सुंदर था कि वे जान-बुझ कर अपने प्रिय आत्मीय सखाओं से हार जाते थे ताकि उनके मित्रों को खुशी मिले। वे अत्यंत कोमल हृदय के थे। अपने साथियों को जीता कर उनके हृदय में उमंगें भरना चाहते थे।

उनका हृदय अत्यंत विचित्र था। उसमें वे बुद्धि का प्रवेश होने देना नहीं चाहते थे। उनके आचरण से लोगों का मन मुग्ध हुआ करता था। उनके महामानवोचित गुण अलौकिक थे तथा लोकमंगल की भावना उनमें विद्यमान थी।

चार

संलग्न हो विविध कितने सांत्वना कार्य में भी।
वे सेवा भी सतत करती वृद्ध रोगी जनों की।
दीनों, हीनों, निकल विधवा आदि को मानती थीं।
पूजी जाती ब्रज अवनि में देवियों सी अतरू थीं।
खो देती कलह-जनिता आधि के दुर्गुणों को।
धो देती थीं मलिन मन की व्यापिनी कालिमाएँ।
बो देती थीं हृदय तल में बीज भावज्ञता का।
वे थीं चिन्ता विजित गृह में शांति धारा बहातीं।
आटा चींटी विहग गण थे वारि औ-अन्न पाते।
देखी जाती सदय उनकी -दृष्टि कीटादि में भी।
पत्तों को भी न तरू-वर के वे वृथा तोड़ती थीं।
जी से वे थी निरंत रहती भूत-संवर्द्धना में।
'सत्रहवें सर्ग से'

प्रसंग और संदर्भ : अयोध्या सिंह उपाध्याय हरिऔध के काव्य 'प्रिय प्रवास' के सत्रहवें सर्ग में कवि ने राधा को जन सेविका के रूप में प्रस्तुत किया है। ब्रज के तमाम लोगों की सेवा में ही राधा अपना सुख मानती हैं ।

व्याख्या :

हरिऔध जी ने राधा की जनसेविका रूप का चित्रण करते हुए कहा है कि विविध प्रकार के सत्कर्मो में लीन रहने वाली राधा ने वृद्धों और रोगियों की सेवा में अपने को उत्सर्ग कर दिया था। दीन-हीन लोगों, विधवाओं के प्रति उनका आचरण अत्यंत आत्मीयता से भरपूर हुआ करता था। उन्हें हर प्रकार से सुखी और प्रफुल्ल चित्त रखने के लिए भरसक प्रयास करती थीं। बड़ों के प्रति उनका आदर और सम्मान सदैव बना रहता था। उनके इन दुर्लभ मानवीय गुणों के चलते वे ब्रजबालाओं में देवी के रूप में पूजी जाती थीं। इस मान तथा सम्मान से भी राधा कभी अपने को विशिष्ट नहीं मानती थीं। राधा हमेशा कृष्ण का स्मरण भी करती थीं।

कवि ने आगे यह भी कहा है कि राधा झगड़ों से उत्पन्न मानसिक व्यथाओं को सदैव दूर कर देती थीं। मन में फैले दोषों को भी धो डालती थीं। सबके मन में समरसता बनी रहे, इसका प्रयास करती थीं। चिंताग्रस्त लोगों के मन में शांति स्थापना हेतु प्रयत्न करती थीं। सभी को प्रसन्न वदन देखने के लिए नानाविध कोशिश करती थीं। कहा जा सकता है कि लोक सेवा से उन्हें परम संतोष की प्राप्ति होती थी।

कवि का कहना है कि जब जीव स्वयं दुखी होता है तो जीवों की भी पीड़ा को भलीभाँति महसूस कर पाता है और उनके कष्टों को दूर करने के लिए आगे बढ़ता है। राधा ने इस कर्म को अपना धर्म मान

शब्दार्थ :

1) संलग्न- लगी रहती 2) विविध- अनेक प्रकार के 3) विहग - पक्ष 4) सदप- दया के साथ 5) अवनि- पृथ्वी 6) तल - अंदर 7) वारि- पानी 8) वृथा- व्यर्थ में

लिया था। राह पर गुजरने वाली चींटियों को देख कर राधा आटा खिलाया करती थीं। पक्षी आदि को अन्न और जल दिया करती थीं। बड़े से बड़े पेड़ के पत्तों को भी व्यर्थ तोड़ना

नहीं चाहती थीं। यह इसलिए कि पत्ते पेड़ के अंश होते हैं। पत्ते तोड़े जाएँ तो वृक्षों को कष्ट पहुंचता है। इस प्रकार राधा नित्य ही जीव मात्र की उन्नति में डूबी रहती थीं।

विशेष :

इस अंश में जनसेविका राधा का उदात्त चित्रण किया गया है। कवि ने राधा को मनुष्य से देवी रूप में पहुंचाया है। मनुष्य अपने प्रयास और सतकर्मों से देवत्व की प्राप्ति कर सकता है। मानवीय गुणों से सम्पन्न व्यक्ति ही समाज तथा देश की रक्षा कर सकता है। राधा की संवेदना का विकास मानव जाति तक सीमित न होकर यह मानवेतर प्राणियों तक प्रसरित है। राधा के व्यक्तित्व और चरित्र के इस निर्माण में कवि ने अपने समय और समाज का पूरा ध्यान रखा है। अर्थात, कवि ने अपने देश-काल में जनसेवा को सर्वोपरि माना है। तत्सम प्रधान खड़ी बोली में रचित इस काव्य का महत्व स्वयंसिद्ध है।

12.3.1 प्रिय प्रवास का उद्‌देश्य

जीवन और समाज के हित साधना से युक्त साहित्य रचना ही वास्तव में उत्द्भष्ट साहित्य रचना है। महान् कथाकार प्रेमचंद का यह कथन अक्षरशः सही है कि साहित्य उसी रचना को कहेंगे जिसमें जीवन की सच्चाई प्रकट की गई हो। अर्थात् जो जीवन एवं समाज के लिए एक नयी और सही राह दिखाता हो। हिंदी साहित्य को रचने वाले महान् साहित्यकारों ने भिन्न-भिन्न कालों में ऐसे ही महत्वपूर्ण साहित्य की रचना की है। ऐसे साहित्यकारों में हरिऔध का भी नाम शामिल है। कृष्ण भक्ति परंपरा के अनुकूल रचे गए काव्य रचनाओं की श्रृंखला में ''प्रिय प्रवास'' को भी रखा जा सकता है।

किंतु इसका मुख्य उद्देश्य केवल कृष्ण भक्तों को कृष्ण की गाथा सुना कर प्रसन्न करना ही नहीं बल्कि इससे हटकर और भी महत्वपूर्ण उद्‌देश्य को स्पष्ट करना है। इस संदर्भ में पाठ में आपने स्वयं हरिऔध के कथन को पढ़ा है। उनका कथन है ''हम लोगों का एक संस्कार है.....

मैंने श्री कृष्ण को इस ग्रंथ में एक महापुरुष की भांति अंकित किया है, ब्रह्म करके नहीं।''

इससे स्पष्ट है कि वे समयानुकूल ही काव्य रचना कर रहे थे। कृष्ण को उन्होंने एक जननायक एवं सच्चे नेता के रूप में प्रस्तुत किया है। कृष्ण गोकुल से मथुरा जाते हैं। वहां उनका कार्य राजनीति को संभालना है। वे वापस कभी नहीं लौटते। यह इसी बात का संकेत करता है कि व्यक्तिगत प्रेम से बढ़कर राष्ट्र प्रेम महत्वपूर्ण है। मथुरा में कंस तथा शिशुपाल एवं देश के कई भाग में जरासंध जैसे आतताइयों ने अराजकता एवं आतंक फैला रखा था। जनता इनके अत्याचार से कराह रही थी। कृष्ण इन सबका संहार करते हैं। उनके व्यक्तिगत प्रेम से बढ़कर राष्ट्र प्रेम है। कवि स्वयं कहता है-

स्वजाति की देख अतीत दुर्दशा
विगर्हणा देख मनुष्य मात्र की।
विचार के प्राण-समुह कष्ट को,
हुए समुत्तेजित वीर केसरी।
आगे कृष्ण का चिंतन है यह वास्तव में कवि का ही चिंतन है-
विपत्ति में रक्षण सर्वभूत का,
सहाय होना असहाय जीव का।
उबारना संकट से स्वजाति को
मनुष्य का सर्वप्रधान धर्म।
राष्ट्र में व्याप्त समस्याओं के प्रति उनकी चिंता है-
पेचीदे नव राजनीति पचड़े जो वृद्धि हैं पा रहे।

यात्रा में ब्रजभूमि की अहृद वे हैं विघ्नकारी बड़े।
आते वासर हैं नवीन जितने लाते नये प्रश्न हैं।
होता है उनका दुरूहपन भी व्याघातकारी महा।

उपरोक्त पंक्तियां वास्तव में तत्कालीन राजनीतिक नेताओं से ही जोड़कर लिखी गई। कवि अंग्रेजों के खिलाफ आंदोलन कर रहे भारतीय नेताओं में जोश दिलाने का ही प्रयत्न कर रहा था। काव्य में 'वनदाह' की घटना का वर्णन कर कवि तत्कालीन उस गलती की ओर लोगों का ध्यान दिलाने चाहते थे जब लोग क्रोध में व्यक्तिगत द्वेश से राष्ट्र की संपत्ति का भी नुकसान करते थे। ऐसे विनाशकारी तत्वों को ललकारे हुए कृष्ण का यह कथन बहुत ही महत्वपूर्ण है -

अतः सबों से यह श्याम ने कहा
स्व जाति उद्धार महान् धर्म है।
चलो करें पावक में प्रवेश औ।
सधेनु लेवें निज जाति को बचा।

जो अपने प्राणों का भय करता है वह न तो सच्चा नेता है और न ही उससे कोई राष्ट्रहित होने वाला है। कृष्ण कहते हैं -

बिना न त्यागे ममता स्व-प्राण की
बिना न जोखों-ज्वालादाग्नि में पड़े।
न हो सका विश्व महान-कार्य है।
न सिद्ध होता भव जन्म हेतु है।

राष्ट्रीय आंदोलन के समय नेता बिन प्राणों का मोह किये संघर्ष में कूद पड़े अपने भाषणों में वे लोगों में प्राण मोह त्यागने की बात कहते थे। राष्ट्र के लिए प्राण त्यागने से अमृत एवं ख्याति मिलेगी यही संदेश वे दिया करते थे। 'प्रिय प्रवास' में हरिऔध ने कृष्ण के मुख से ऐसा ही संदेश कहलवाया है -

''बढ़ों करो वीर स्वजाति का भला,
अपार दोनों विध लाभ है हमें।
किया स्व कर्तव्य उबार भी लिया।
सु-कीर्ति पाई यदि भस्म हो गये।''

काव्य करना ही महत्वपूर्ण है विपत्तियों से घबड़ा कर बैठ जाना कायरता है। परंपरागत कृष्ण कथा में यह दिखाया जाता रहा है कि अतिवृष्टि के समय कृष्ण ने गोवर्धन पर्वत को उठा कर गोकुलवासियों की रक्षा की। लेकिन प्रिय प्रवास का कृष्ण ऐसा नहीं करता। वह लोगों को इस विपत्ति से उबरने के लिए कड़ी मेहनत का उपदेश देता है। शिथिलता अर्थात् अर्कमण्यता से दूर होने के लिए कवि का कहना है --

विपद से वर-वीर समान जो,
समर अर्थ समुघटहो सका।
विजय भूति उस सब काल ही।
वरपा है करही सु-प्रसन्नता हो।
लोक सेवा को कवि ने स्वर्ग सुख तथा राज सुख से उत्तम बताया -
भू में सड़ा मनुज है बहु मान पाता,
राज्याधिकार अथवा धन द्रव्य द्वारा।
होता परंतु वह पूजित विश्व में है।
निरूस्वार्थ भूत-हित और कर लोक सेवा।''

तत्कालीन समय में कुछ स्वार्थी भारतीयों ने अंग्रेजों का साथ दिया। लालच के कारण उन्होंने शासकों के साथ मिलकर अपने ही भाइयों पर अत्याचार किया। ऐसे दुर्जनों को दण्ड देना उचित है -

क्षमा नहीं है खल के लिए भली
स्माज उत्सादक दण्ड योग्य है।
कुकर्म कारी नर का उबारना
सु-कर्मियों को करता विपन्न है।

अंत में कवि ने विश्व प्रेम को स्थान दिया है। कृष्ण राधा व्यक्तिगत प्रेम से ऊपर उठ जाते हैं। कृष्ण राज्य की सेवा के लिए समर्पित हो जाते हैं और राधा ग्राम सेविका बन जाती है। मानव-प्रेम या विश्व प्रेम के बारे में कृष्ण का कथन है -

वे जी से हैं अवनिजन के प्राणियों के हितैशी
प्राणों से है आधिक उनको विश्व का प्रेम
राधा ग्राम सेविका से देवी बन जाती है -
वे छाया थीं सु-जन सिर की शासिका थी खलों की।
कंगालों की परमनिधि थीं औषधि पीड़ितों की।
दोनों की बहिन, जननी थी अनाथश्रितों की।
आराध्या थी ब्रज अवनि की प्रेमिका विश्व की थी।

इस प्रकार ''प्रिय प्रवास'' रचना के माध्यम से कवि ने राष्ट्रीय जागरण को ही स्थान दिया है। कथा भले ही पुराण से संबंधित है। लेकिन उस समय की राष्ट्रीय एवं सामाजिक समस्याओं के संदर्भ को ध्यान में रखकर ही घटनाओं तथा पात्रों की सृष्टि की गई है। इसलिए 'प्रिय प्रवास' का महत्व बना हुआ है।

बोध प्रश्न 2

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दीजिए-

1. 'प्रिय प्रवास' रचना में कृष्ण के चरित्र के प्रति स्वयं कवि का क्या कथन है?

   .....

   .....

   .....

   .....

2. मथुरा जाने के बाद कृष्ण गोकुल क्यों नहीं लौटते?

   .....

   .....

   .....

   .....

अभ्यास

1. कृष्ण एवं राधा ने व्यक्तिगत प्रेम के स्थान पर लोक कल्याण को अधिक महत्व दिया। प्रिय प्रवास के आधार पर इस कथन का उत्तर दस पंक्तियों में लिखिए।

12.4 उपयोगी पुस्तकें

1. डॉ. रामविलास शर्मा : भारतेन्दु हरिश्चंद्र और हिंदी नवजागरण की समस्याएँ, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली
2. आचार्य रामचन्द्र शुक्ल : हिंदी साहित्य का इतिहास, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी
3. डॉ. नंदकिशोर नवल : आधुनिक हिंदी कविता का इतिहास, भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली
4. डॉ. रामविलास शर्मा : हिंदी नवजागरण और महावीर प्रसाद द्विवेदी, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

इकाई 13 काव्य वाचन और विश्लेषण : मैथिली शरण गुप्त, रामनरेश त्रिपाठी

इकाई की रूपरेखा

13.0 उद्देश्य

13.1 प्रस्तावना

13.2 'यशोधरा' के चयनित अशों की व्याख्या

13.3 'साकेत' के चयनित अंशों की व्याख्या

13.4 'अन्वेषण' के चयनित अंशों की व्याख्या

13.5 'वह देश कौन सा है' के चयनित अंशों की व्याख्या

13.6 सारांश

13.7 उपयोगी पुस्तकें

13.0 उद्देश्य

मैथिलीशरण गुप्त और राम नरेश त्रिपाठी आधुनिक हिंदी कविता के अत्यंत प्रसिद्ध और प्रतिनिधि कवि हैं। दोनों कवियों के रचना-संसार से हिंदी काव्य समृद्ध हुआ है। इस इकाई में आप मैथिलीशरण की दो चर्चित और महत्वपूर्ण काव्य-कृतियों - 'यशोधरा' और 'साकेत' एवं रामनरेश त्रिपाठी की 'अन्वेषण' और 'वह देश कौन-सा है' के चयनित अंशों का पाठ करेंगे। इस इकाई को पढ़ने के बाद आप :

- उल्लिखित कवियों की कविताओं की भाव-भूमि से परिचित हो सकेंगे
- कविताओं का रसास्वादन कर सकेंगे
- कवियों की भाषिक विशेषताएँ समझ सकेंगे
- इन कविताओं के माध्यम से कवि की चिंताओं की चर्चा कर सकेंगे
- इन कविताओं के काव्य-सौष्ठव का स्वरूप जान सकेंगे।

13.1 प्रस्तावना

मैथिलीशरण गुप्त (1886-1964) द्विवेदी युग के प्रतिनिधि कवि हैं। 'जयद्रथ-वध' और 'भारत भारती' के प्रकाशन से लोकप्रियता के शिखर पर पहुंचे मैथिलीशरण गुप्त को 1930 में महात्मा गांधी ने राष्ट्रकवि की उपाधि दी थी । उन्होंने प्राचीन आख्यानों को अपने काव्य का वर्ण्य विषय बनाकर उनके सभी पात्रों को एक नया अभिप्राय दिया है। जयद्रथवध, पंचवटी, सैरन्ध्री, बक संहार, द्वापर, नहुष, जयभारत, हिडिम्बा, विष्णुप्रिया, यशोधरा, साकेत एवं रत्नावली आदि रचनाएं इसके उदाहरण हैं। 'साकेत' महाकाव्य है तथा शेष सभी काव्य खंड काव्य के अंतर्गत आते हैं।

गुप्त जी ने कुछ नाटक भी लिखे हैं। इन नाटकों में अनघ, तिलोत्तमा, चरणदास, विसर्जन आदि उल्लेखनीय हैं। खड़ी बोली को काव्य भाषा का दर्जा और जन-जन तक पहुंचाने में मैथिलीशरण गुप्त की भूमिका सबसे महत्वपूर्ण है। मैथिलीशरण गुप्त जी को साहित्य जगत् में 'दद्दा' नाम से सम्बोधित किया जाता है ।

रामनरेश त्रिपाठी (1881-1962) मैथिली शरण गुप्त की 'भारत भारती' की भाषा और अभिव्यक्ति से अत्यंत प्रभावित हुए थे। इसी प्रभाव के फलस्वरूप उन्होने खड़ीबोली में लिखना शुरू किया था। उन्होंने राष्ट्रप्रेम की कविताएँ लिखीं। इन्होंने कविता के अलावा उपन्यास, नाटक आलोचना, हिंदी साहित्य का संक्षिप्त इतिहास तथा बालोपयोगी पुस्तकें भी लिखीं। इनकी मुख्य काव्य कृतियाँ हैं- मिलन, स्वप्न, पथिक तथा मानसी। इनमें 'मानसी' फुटकर कविताओं का संग्रह है और शेष तीनों कृतियाँ प्रेमाख्यानक खंडकाव्य हैं। रामनरेश त्रिपाठी ने लोक गीतों के चयन के लिए सारे देश का भ्रमण किया। इनकी कविताओं के मुख्यतः दो विषय हैं-देशभक्ति और निर्धन जनता के प्रति सहानुभूति। उनकी कविताओं में राजभक्ति का अभाव तो है ही, तत्कालीन शासन व्यवस्था के प्रति तीव्र व्यंग्य भी परिलक्षित होता है।

13.2 'यशोधरा' के चयनित अंशों की व्याख्या

मैथिली शरण गुप्त की काव्य कृति 'यशोधरा' के चयनित अंश का पाठ करने के पहले आपको यह जान लेना अनुचित न होगा यशोधरा एक खंडकाव्य है। इसमें राजकुमार सिद्धार्थ की पत्नी यशोधरा के मनोभावों का सुंदर चित्रण हुआ है। यशोधरा एक वियोगिनी नारी है। सिद्धार्थ उन्हें रात्रि में सोती हुई छोड़कर राजप्रासाद से चुपचाप संन्यास हेतु निकल जाते हैं। इससे यशोधरा का मन आहत हो जाता है। यशोधरा को इसी बात का दुःख था कि उसके पति ने यह समझ लिया होगा कि वह उनके मार्ग की बाधा बनेगी इसीलिए उसे बिना बताएं घर छोड़कर चले गये। यशोधरा का कहना है कि यदि वे उस पर विश्वास करते और गृहत्याग की बात बता देते तो वह उन्हें पूरा सहयोग देती।

अब आप कवितांश का वाचन कीजिए :

एक

सिद्धि हेतु स्वामी गये, यह गौरव की बात,
पर चोरी-चोरी गये, यही बड़ा व्याघात,[1]
सखि, वे मुझसे कह कर जाते,
कह, तो क्या मुझको वे अपनी पथ-बाधा ही पाते?

मुझको बहुत उन्होंने माना,
फिर भी क्या पूरा पहचाना?
मैंने मुख्य उसी को जाना,
जो वे मन में लाते।
सखि, वे मुझसे कह कर जाते।

स्वयं सुसज्जित करके क्षण में,
प्रियतम को, प्राणों के पण में,
हमीं भेज देती हैं रण में-
क्षात्र-धर्म के नाते।

सखि, वे मुझसे कह कर जाते।
हुआ न यह भी भाग्य अभागा,
किस पर विफल गर्व अब जागा?
जिसने अपनाया था, त्यागा,
रहे स्मरण ही आते।
सखि, वे मुझसे कह कर जाते।

नयन उन्हें हैं निष्ठुर[2] कहते,
पर इनसे जो आँसू बहते,
सदय हृदय वे कैसे सहते?
गये तरस ही खाते।
सखि, वे मुझसे कह कर जाते।

जायें सिद्धि पावें वे सुख से,
दुखी न हों इस जन के दुख से,
उपालम्भ[3] दूँ मैं किस मुख से?
आज अधिक वे भाते।

गये, लौट भी वे आयेंगे,
कुछ अपूर्व अनुपम लायेंगे,
रोते प्राण उन्हें पायेंगे,
पर क्या गाते गाते?
सखि, वे मुझसे कह कर जाते।

गये लौट भी वे आयेंगे,
कुछ अपूर्व अनुपम लायेंगे,
रोते प्राण उन्हें पायेंगे,
पर क्या गाते गाते?
सखि, वे मुझसे कह कर जाते।

एक

आइए चयनित अंशों की विस्तृत व्याख्या से परिचय प्राप्त करते हैं -

सिद्धि हेतु स्वामी गए, यह गौरव की बात,
पर चोरी-चोरी गए, यही बड़ा व्याघात,
सखी, वे मुझसे कह कर जाते
कह, तो क्या मुझसे वे अपनी पथ-बाधा ही पाते ?

संदर्भ और प्रसंग : प्रस्तुत पंक्तियाँ मैथिली शरण गुप्त द्वारा रचित 'यशोधरा' से उद्धृत हैं। सिद्धार्थ गौतम अपनी पत्नी यशोधरा और पुत्र राहुल को निद्रावस्था में छोड़कर संन्यास धर्म अपनाने और सिद्धि प्राप्त करने हेतु वन में चले गए। इसके पश्चात यशोधरा इस प्रसंग में दुखी होकर सखी से मन की बात कह रही हैं।

व्याख्या : सिद्धार्थ अपने जीवन के सत्य की खोज में संसार के सुखों का त्याग करके वन में चले गए। जन कल्याण हेतु उनका सत्य की खोज में चले जाना निश्चय ही गौरव और अभिमान की बात है। परंतु यशोधरा कह रही हैं कि वे उनसे छुपकर चले गए, इसलिए उसे बहुत दुख हुआ। यदि वे कहकर जाते तो वह उन्हें रोक नहीं लेतीं, उनके मार्ग कि बाधा नहीं बनतीं। लेकिन सिद्धार्थ ने ऐसा नहीं किया, इसलिए यशोधरा को बहुत कष्ट होता है।

विशेषः

1. 'बड़ा व्याघात' में अनुप्रास, 'चोरी-चोरी' में पुनरुक्तिप्रकाश एवं' तो क्या--- पथबाधा ही पाते' में प्रश्न अलंकार है।
2. स्त्री को सबसे अधिक दुख यह जानकार होता है कि उसका पति उस पर अविश्वास करता है। पति पूर्ण विश्वास की अधिकारिणी नहीं समझता है।
3. इन काव्य-पंक्तियों की भाषा तत्सम प्रधान खड़ी बोली हिंदी है।

दो

मुझको बहुत उन्होने माना
फिर भी क्या पूरा पहचाना ?
मैंने मुख्य उसी को जाना,
जो वे मन में लाते
सखी, वे मुझसे कह कर जाते ।

संदर्भ तथा प्रसंग : उपरोक्त पंक्तियाँ मैथिली शरण गुप्त की बहुचर्चित काव्यकृति 'यशोधरा' से अवतरित हैं। सिद्धार्थ गौतम अपनी पत्नी यशोधरा और पुत्र राहुल को निद्रावस्था में छोड़कर संन्यास धर्म अपनाने और सिद्धि प्राप्त करने हेतु वन में चले गए। इसके पश्चात यशोधरा गौतम के इस आचरण से अत्यंत दुखी होकर अपनी मनोभावनाएँ प्रकट करती है। उसकी मनोदशा का सुंदर चित्रण गुप्त जी ने किया है।

व्याख्याः यशोधरा अपने गृहस्थ-जीवन की स्मृतियों को याद करते हुए कह रही हैं कि उनके पति से उन्हें अत्यधिक स्नेह, प्रेम और दुलार मिला है। वे उन्हें बहुत मानते भी रहे हैं। यशोधरा के मन में एक सवाल गूँजता है कि क्या वास्तव में उनके पति उन्हें पहचानते भी हैं? यदि वे उन्हें भली-भांति पहचानते तो इस तरह रात के अंधेरे में चोरी-छुपे वन चले नहीं गए होते बल्कि उन्हें कहकर ही निकले होते। पुनः वे कहती हैं कि उन्होने आज तक वही किया जो उन्हें पसंद रहा, जो उन्हें रुचिकर प्रतीत हुआ। वह मुख्यतः उसी बात को जान पाती थीं जो उनके मन में रहती थी। बेहतर होता कि वे यशोधरा से कहकर जाते। ऐसा होने पर यशोधरा को कोई मानसिक कष्ट न होता और उन्हें खुशी भी होती कि सिद्धार्थ उनकी मनोभावनाओं को समझते हैं। इससे यशोधरा का आत्म-सम्मान भी बना रहता। वह कभी भी उनकी राह की बाधा न बनती, बल्कि उनके मार्ग को प्रशस्त करने में सहायता कर सकती थी।

विशेष :

1. उपरोक्त अंश में विरहिणी यशोधरा की मनोव्यथा का चित्रण हुआ है।
2. स्त्री के प्रति पुरुष की हीन मनोवृत्ति का परिचय मिलता है।
3. गृहस्थ जीवन की स्मृतियों का स्मरण हुआ है।
4. उपेक्षित और विरहिणी नारी के आत्मसम्मान को कवि ने प्रभावशाली ढंग से चित्रित किया है।
5. खड़ी बोली कविता का सहज और स्वाभाविक रूप विद्यमान है।
6. नाटक, गीत, प्रबंध, पद्य और गद्य सभी के मिश्रण एक मिश्रित शैली में 'यशोधरा' की रचना हुई है।

तीन

स्वयं सुसज्जित करके क्षण में,
प्रियतम को, प्राणों के पण में,
हमीं भेज देती हैं रण में-
क्षात्र-धर्म के नाते।
सखि, वे मुझसे कह कर जाते।

हुआ न यह भी भाग्य अभागा,
किस पर विफल गर्व अब जागा?

जिसने अपनाया था, त्यागा,
रहे स्मरण ही आते।
सखि, वे मुझसे कह कर जाते।

संदर्भ और प्रसंग : पूर्ववत

व्याख्या : यशोधरा कहती है कि भारतीय नारी का इतिहास रहा है कि उसे क्षत्रिय कुल धर्म का पालन करना आता है। प्राचीन काल से स्त्री अपने पति को अस्त्र -शस्त्रों से सुसज्जित करके युद्ध क्षेत्र में भेजती रही है। उस युद्धक्षेत्र में जहां प्राणों की होड़ लगी रहती है। मंगल टीका लगाकर उनकी विजय कामना करते हुए उन्हें युद्ध क्षेत्र में जाने के लिए प्रेरित करती रही है। जिस नारी की यह परंपरा रही है भला वह सिद्धि प्राप्ति हेतु वन में जानेवाले पति की राह का रोड़ा बनकर क्यों खड़ी होती ? सिद्धि हेतु गमन करने वाले पति को भला वह रोक सकती है? कहने का आशय यह है कि यशोधरा अपने पति के मार्ग की बाधा बनकर कदापि खड़ी होना नहीं चाहती थीं।

यशोधरा यह भी कहती हैं कि यदि सिद्धार्थ उन्हें कहकर जाते तो उन्हें आनंद के साथ विदा करतीं। लेकिन यशोधरा के लिए अपने पति को हर्षपूर्वक विदा करने का भी सौभाग्य प्राप्त नहीं हुआ। अब तो यशोधरा के लिए मिथ्या गर्व करने के लिए भी कोई अवसर नहीं बचा। जिस पति ने उन्हें अत्यंत प्रेम के साथ अपनाया था उन्हीं ने अब यशोधरा को त्याग भी दिया है। भले ही सिद्धार्थ उन्हें भूल जाएँ लेकिन यशोधरा उन्हें सदैव स्मरण करती रहेगी। अर्थात सिद्धार्थ के प्रति यशोधरा के प्रेम के स्वरूप में कोई परिवर्तन नहीं होगा।

विशेष :

1. उपरोक्त अवतरण में भारतीय स्त्री के क्षत्राणी कुल की परंपरा का उल्लेख मिलता है।
2. भारतीय स्त्री की अविचलता का उदाहरण प्रस्तुत किया गया है।
3. विरहिणी स्त्री की मनोदशा का जीवंत चित्रण किया गया है।
4. उपेक्षित और विरहिणी नारी के आत्मसम्मान को कवि ने प्रभावशाली ढंग से चित्रित किया है।
5. खड़ी बोली कविता का सरल और सहज रूप विद्यमान है।
6. तत्सम प्रधान भाषा की प्रवाहशीलता देखते ही बनती है।
7. 'स्वयं सुसज्जित', 'प्रियतम-प्राणों-पण -परण' में अनुप्रास अलंकार है।

चार

सखि, वे मुझसे कह कर जाते.....आज अधिक वे भाते।

संदर्भ और प्रसंग : पूर्ववत

व्याख्या : उद्धृत अंश में यशोधरा अपनी शारीरिक दशा का वर्णन करते हुए कहती है कि आँखें उन्हें निष्ठुर कहती हैं क्योंकि उन्होने नेत्रों को बिना बतलाए इस प्रकार त्याग दिया है, परंतु, नेत्रों से बहनेवाली अश्रुधारा को वे दयालु हृदय भला किस प्रकार सह सकते थे। इसलिए उन्होने चोरी-चोरी गृह-त्याग करना ही उपयुक्त समझा। यशोधरा का विचार है कि सिद्धार्थ ने वन जाकर उसके प्रति अच्छा ही आचरण किया। वे सुखपूर्वक सिद्धि प्राप्त करें। कभी भी यशोधरा के दुख से वे पीड़ित न हों। यशोधरा उन्हें किसी भी प्रकार उलाहना नहीं देना चाहती हैं। इस विरहावस्था में भी वे अधिक प्रिय लग रहे हैं, क्योंकि उन्होने संसार के कल्याण हेतु यह त्याग किया है।

विशेष :

1. मैथिली शरण गुप्त ने अवतरित अंश में सिद्धार्थ के प्रति यशोधरा के अमलिन प्रेम का चित्रण किया है। इस प्रेम चित्रण से गुजरते समय हमें गोपियों का कृष्ण प्रेम स्मरण हो आता है। प्रेम में प्रियतम की उद्देश्य और लक्ष्य प्राप्ति की कामना और अपनी स्थिति की परवाह न करना प्रेम को उदात्त बनाता है।
2. अवतरित अंश में नारी का त्याग चित्रित हुआ है।
3. प्रेम भाव में प्रियतम का दोष न ढूँढना और उनसे किसी प्रकार की कोई शिकायत न करना तटस्थता नहीं बल्कि प्रेम की परिपक्वता है।
4. बृहत्तर प्रेम हेतु निजी प्रेम को त्यागने की भावना तत्कालीन युग स्पंदन का प्रतीक है।
5. भाषा की सरलता और सहजता पर कवि का पूरा ध्यान रहा है।
6. तुक के प्रति कवि का ध्यान परिलक्षित होता है।
7. नाटक, गीत, प्रबंध, पद्य और गद्य सभी के मिश्रण एक मिश्रित शैली में 'यशोधरा' की रचना हुई है।

व्याख्या : पाँच गये, लौट भी वे आयेंगे .....सखि, वे मुझसे कह कर जाते।

संदर्भ और प्रसंग : पूर्ववत

व्याख्या : कविता के अंतिम भाग में यशोधरा की स्पष्ट मान्यता है कि उनके पति भले ही अभी गृहा-त्याग किया है लेकिन उन्हें सिद्धि अवश्य प्राप्त होगी। इस सिद्धि प्राप्ति के पश्चात उनका पुनरागमन होगा और तभी यशोधरा के व्यथित प्राण उन्हें प्राप्त कर सकेंगे। उनके दर्शन करेंगे। यह सिद्धि उनसे अधिक संपूर्ण लोक के कल्याण हेतु फलप्रसू होगी।

विशेष :

1. गुप्त जी ने भारतीय नारी के अपूर्व उज्ज्वल जीवन की एक मधुर झलक दिखाई है। विलासिता से दूर भारतीय स्त्री अपने पति को पूर्णतया सहयोग प्रदान करती है। यदि इसे परंपरा कहें तो 'सखि वे मुझसे कहकर जाते' में उसका आत्मसम्मान, स्वाभिमान छिपा हुआ है जो नवीनता का सूचक है। इस तरह से यशोधरा में प्राचीनता और नवीनता का सुंदर समन्वय साधित हुआ है। तत्कालीन भारतीय संदर्भ पर ध्यान केन्द्रित करें तो पाते हैं कि गांधीजी ने अधिक अधिक से संख्या में स्त्रियों को भारतीय स्वतन्त्रता आंदोलन में भाग लेने के लिए आह्वान किया था। इस दृष्टि से यशोधरा का चरित्र और व्यक्तित्व विशेष प्रासंगिक है।
2. बृहत्तर प्रेम हेतु निजी प्रेम को त्यागने की भावना तत्कालीन युग स्पंदन का प्रतीक है।
3. भाषा की सरलता और सहजता पर कवि का पूरा ध्यान रहा है।
4. तुक के प्रति कवि का ध्यान परिलक्षित होता है।

इस संदर्भ में आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी का कथन दृष्टव्य है- "मैथिलीशरण गुप्त ने संपूर्ण भारतीय पारिवारिक वातावरण में उदात्त चरित्रों का निर्माण किया है। उनके काव्य शुरू से अंत तक प्रेरणा देने वाले हैं। उनमें व्यक्तित्व का स्वतः समुच्छित उच्छ्वास नहीं है, पारिवारिक व्यक्तित्व का और संयत जीवन का विलास है। वस्तुतः गुप्तजी पारिवारिक जीवन के कथाकार है। परिवार का अस्तित्व नारी के बिना असंभव है। इसीलिए वे नारी

को जीवन का महत्वपूर्ण अंग मानते हैं। नारी के प्रति उनकी दृष्टि रोमानी न होकर मर्यादावादी और सांस्कृतिक रही है। वे अपने नारी पात्रों में उन्हीं गुणों की प्रतिष्ठा करते हैं, जो भारतीय कुलवधू के आदर्श माने गये हैं। उनकी दृष्टि में नारी भोग्य मात्र नहीं अपितु पुरुष का पूरक अंग है। इसीलिए उनके काव्य में नारी के स्वतंत्र व्यक्तित्व स्वाभिमान, दर्प और स्वावलम्बन का समुचित चित्रण हुआ है। उनके काव्य में नारी, अधिकारों के प्रति सजग, शीलवती, मेधाविनी, समाजसेविका, साहसवती, त्यागशीलता और तपस्विनी के रूप में उपस्थित हुई है।"

मैथिली शरण गुप्त ने संयुक्त परिवार को सर्वोपरि महत्व दिया है। उन्होने नैतिकता और मर्यादा से युक्त सहज सरल पारिवारिक व्यक्ति को श्रेष्ठ माना है। नर - नारी के प्रति गुप्तजी की पूर्ण आस्था है। इस आस्था के दर्शन उनके काव्य में देखे जा सकते हैं। आस्था की टूटन गुप्तजी के लिए असहनीय है। उन्हें नारी के प्रति पुरुष का अनुचित आचरण कदापि स्वीकार नहीं है।

13.3 'साकेत' के चयनित अंशों की व्याख्या

आप जानते हैं कि 'साकेत' मैथिली शरण गुप्त द्वारा रचित एक महाकाव्य है। आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी गुप्त जी के साहित्यिक गुरु थे। उनकी प्रत्यक्ष प्रेरणा से 'साकेत' की रचना हुई है। इस महाकाव्य के केंद्र में उर्मिला है। महावीर प्रसाद द्विवेदी जी के निबंध 'कवियों की उर्मिला विषयक उदासीनता' पढ़ने के बाद एक लंबे अरसे तक इस महाकाव्य की रचना में कवि ने अपने को नियोजित किया। 'साकेत' में लक्ष्मण की पत्नी उर्मिला के विरह को अत्यंत मार्मिकता के साथ नवां सर्ग में अंकित किया गया है। इसके अतिरिक्त कैकैयी के चरित्र पर लगे कलंक पर नए सिरे से विचार करते हुए कवि ने उनके मातृत्व को चित्रित किया है। आपके लिए चुने गए अंश में सीता का वर्णन हुआ है। ध्यान दें कि कवि ने रामकथा की पुनरावृत्ति के उद्देश्य से 'साकेत' की रचना नहीं की है। आप देख पाएंगे कि इसमें कवि ने अपने समय की स्थितियों और चेतनाओं का भी समावेश किया है। आपका अध्येतव्य विषय 'साकेत' के अष्टम सर्ग से अवतरित किया गया है। इस सर्ग में सीता-राम के चित्रकूट का जीवन, भरत के साथ अयोध्यावासियों का राम को मनाना, कैकेयी का अनुताप, लक्ष्मण-उर्मिला का मिलन और अंत में राम की पादुका लेकर भरत के लौटने का प्रसंग वर्णित है। बहरहाल आपके लिए 'साकेत' के चयनित अंश का ध्यानपूर्वक अध्ययन करें :

निज सौध[1] सदन में उटज[2] पिता ने छाया,
मेरी कुटिया में राज-भवन मन भाया।

सम्राट स्वयं प्राणेश, सचिव देवर हैं,
देते आकर आशीष हमें मुनिवर हैं।

धन तुच्छ यहाँ-यद्यपि असंख्य आकर हैं,
पानी पीते मृग-सिंह एक तट पर हैं।

सीता रानी को यहाँ लाभ ही लाया,
मेरी कुटिया में राज-भवन मन भाया।
क्या सुन्दर-लता-वितान[4] तना है मेरा,
पुंजाकृति गुंजित कुंज घना है मेरा।
जल निर्मल, पवन पराग-सना है मेरा,

गढ़ चित्रकूट -दृढ़-दिव्य बना है मेरा।
प्रहरी[5] निर्झर[6], परिखा प्रवाह की काया,
मेरी कुटिया में राज-भवन मन भाया।

औरों के हाथों यहाँ नहीं पलती हूँ,
अपने पैरों पर खड़ी आप चलती हूँ।
श्रमवारिबिन्दुफल[7] स्वास्थ्यमुक्ति फलती हूँ,
अपने अंचल से व्यंजन आप झलती हूँ।

तनु-लता-सफलता-स्वादु आज ही आया,
मेरी कुटिया में राज-भवन मन भाया।

जिनसे ये प्रणयी प्राण त्राण पाते हैं,
जो भरकर उनको देख जुड़ा जाते हैं।
जब देव कि देवर विचर-विचार आते हैं,
तब नित्य नये दो-एक द्रव्य लाते हैं।

उनका वर्णन ही बना विनोद सवाया,
मेरी कुटिया में राज-भवन मन भाया।

किसलय[8]-कर स्वागत-हेतु हिला करते हैं,
मृदु मनोभाव-सम सुमन खिला करते हैं।
डाली में नव फल नित्य मिला करते हैं
तृण तृण पर मुक्ता-भार झिला करते हैं।
निधि खोले दिखला रही प्रकृति निज माया,

मेरी कुटिया में राज-भवन मन भाया।

कहता है कौन कि भाग्य ठगा है मेरा?
वह सुना हुआ भय दूर भगा है मेरा।
कुछ करने में अब हाथ लगा है मेरा,
वन में ही तो गार्हस्थ[9] जगा है मेरा।

वह वधु जानकी बनी आज यह जाया,
मेरी कुटिया में राज-भवन मन भाया।

फल-फूलों से हैं लदी डालियाँ मेरी,
वे हरी पत्तलें, भरी थालियाँ मेरी।
मुनि बालाएँ हैं यहाँ आलियाँ मेरी,
तटिनी की लहरें और तालियाँ मेरी।

क्रीड़ा-सामग्री बनी स्वयं निज छाया,
मेरी कुटिया में राज-भवन मन भाया।

मैं पली पक्षिण[10] विपिन-कुंज-पिंजर[11] की,
आती है कोटर-स-श[12] मुझे सुध घर की।
मृदु-तीक्ष्ण वेदना एक एक अन्तर की,
बन जाती है कल-गीति समय के स्वर की।

कब उसे छेड़ यह कण्ठ यहाँ न अघाया?
मेरी कुटिया में राज-भवन मन भाया।

गुरूजन-परिजन सब धन्य ध्येय हैं मेरे,
औषधियों के गुण-विगुण[13] ज्ञेय[14] हैं मेरे
वन-देव-देवियाँ आतिथेय हैं मेरे,
प्रिय-संग यहाँ सब प्रेय श्रेय है मेरे।

मेरे पीछे ध्रुव[15]-धर्म स्वयं ही धाया,
मेरी कुटिया में राज-भवन मन भाया।

नाचो मयूर, नाचो कपोत के जोड़े।
नाचो कुरंग, तुम लो उड़ान के तोड़े।
गाओ दिवि, चातक चटक, भृंग[16] भय छोड़े
वैदेही के वनवास-वर्ष हैं थोड़े।

तितली, तूने यह कहाँ चित्रपट[17] पाया?
मेरी कुटिया में राज-भवन मन भाया।

आओ कलापि[18] निज चन्द्रकला[19] दिखलाओ
कुछ मुझसे सीखो और मुझे सिखलाओ।
गाओ पिंक, मैं अनुकरण करूँ, तुम गाओ,
स्वर खींच तनिक यों उसे घुमाते जाओ।

शुक पढ़ो- मधुर फल प्रथम तुम्हीं ने खाया,
मेरी कुटिया में राज-भवन मन -भाया।

अयि राजहंसि, तू तरस क्यों रोती,
तू शुक्ति-वंचिता[20] कहीं मैथिली[21] होती।

शब्दार्थ

1.दुःख 2. निर्दय 3. उलाहना 4.लताओ. का खेमा या चँदोवा 5. पहरेदार 6. झरना 7. परिश्रम से आयी पसीने की बूँदे. 8. नया निकला हुआ कोमल पत्ता 9.गृहस्थी 10.मादा पक्षी 11.वन बगीचे रूपी, पिंजरा 12. पेड़ का खोखला भाग जिसमे पक्षी निवास करते है 13. गुण- दोष 14 जानने योग्य बात 15. निश्चित -ढ़ 16. एक तरह का कीड़ा 7. वह कपड़ा जिस पर चित्र बना हो 18. च.द्रमा 19. चाँदनी 20. सीपी से वंचित 21. सीता

आइए चयनित अंशों की विस्तृत व्याख्या करते हैः-

एक

औरों के हाथों नहीं यहां पलती हूँ

अपने पैरों पर खड़ी आप चलती हूँ
श्रमवारि बिन्दु फल स्वास्थ्य मुक्ति फलती हूँ
अपने अंचल से व्यजन आप झलती हूँ
तनु-लता-सफलता- स्वादु आज ही लाया।
मेरी कुटिया में राज-भवन मन भाया।

संदर्भ और प्रसंग : प्रस्तुत पंक्तियाँ मैथिलीशरण गुप्त की रचना 'साकेत' से ली गई हैं। 'साकेत' में गुप्तजी ने रामकथा को आधार बनाया है। किन्तु उनका उद्देश्य एक कथा को दोहराना नहीं है। बल्कि इस कथा के माध्यम से वह आधुनिक युग की जरूरतों, परिस्थितियों और समस्याओं की अभिव्यक्ति और समाधान प्रस्तुत करते हैं।

यही कारण है कि इन पंक्तियों में राजरानी सीता को स्वावलंबी रूप से प्रस्तुत किया गया है। महलों के सुख साधनों को छोड़कर वन में आई सीता अपनी स्थिति से प्रसन्न और संतुश्ट है। राजभवन के भोग विलास की तुलना में वन का यह स्वच्छन्द और प्रद्भत जीवन उसे भाता है इसीलिए वह कहती है-

व्याख्या : वन में मैं औरों के हाथों नहीं पलती यानी दास-दासियों की सेवा पर आधारित नहीं हूँ बल्कि अपना काम स्वयं करती हूँ। अपने पैरों पर चलने का अर्थ है कि अब मैं

स्वावलंबी हूँ। यहां पंखा झलने वाली दासियां नहीं हैं। इसीलिए मैं अपने आँचल से स्वयं अपने ऊपर पंखा झलती हूँ यह स्वावलंबन मेरे लिए बड़ा ही उपयोगी है क्योंकि श्रम करके जो पसीना बहाती हूँ उसका समुचित फल भी मुझे मिलता है। यानी परिश्रम करने के कारण मुझे स्वास्थ्य लाभ होता है। शारीरिक श्रम से मिलने वाले आनंद को मैंने आज ही जाना है। इसीलिए मुझे अपनी कुटिया में किसी तरह का अभाव नहीं महसूस होता बल्कि राजभवन जैसा ही आनंद मिलता है। यह कुटिया मेरे मन को राजभवन से भी अधिक भाती है क्योंकि इसने मुझे स्वावलंबी बनाया और मैं मन चाहा कार्य स्वयं कर सकती हूँ।

विशेषः

1. इन पंक्तियों में लेखक ने स्वावलंबन का महत्व बताया है जो गांधी युग की विशेषता है।
2. सीता के पारंपरिक देवी रूप की बजाय उसे मनुष्य रूप में प्रस्तुत किया गया है।
3. खड़ी बोली कविता का सहज और सुंदर रूप इन पंक्तियों में मौजूद है। संस्कृत की तत्सम शब्दावली का प्रयोग है।

दो

किसलय[8] -कर स्वागत-हेतु हिला करते हैं,
मृदु मनोभाव-सम सुमन खिला करते हैं।
डाली में नव फल नित्य मिला करते हैं
तृण तृण पर मुक्ता-भार झिला करते हैं।
निधि खोले दिखला रही प्रकृति निज माया,
मेरी कुटिया में राज-भवन मन भाया।

संदर्भ और प्रसंग : उपर्युक्त कवितांश मैथिली शरण गुप्त के महाकाव्य 'साकेत' के अष्टम सर्ग से लिया गया है। राम-सीता और लक्ष्मण को अयोध्या लौटा लेने के लिए अयोध्या के निवासी चित्रकूट पहुंचे हुए हैं। कवि ने सीता के माध्यम से चित्रकूट की प्राकृतिक सुषमा का चित्रण किया है।

व्याख्या : चित्रकूट की अपरूप शोभा का चित्रण करते हुए सीता कहती हैं कि नए और कोमल पत्ते स्वागत हेतु अपने हाथ हिला करते हैं। मनुष्य के कोमल मनोभाव प्रकट करने के लिए मानो फूल खिला करते हैं। चित्रकूट फलों से लदा हुआ है। इसलिए डाली में नित्य नए फल भरे रहते हैं। तृण -तृण पर ओंस की बूंदें मुक्ता सदृश झिलमिलाते रहते हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि प्रकृति ने अपना अमाप रत्न-भंडार उन्मुक्त कर दिया है। वह अपनी माया से जड़-चेतन सबको मंत्रमुग्ध किए जा रही है। इसीलिए मुझे अपनी कुटिया में किसी तरह का अभाव नहीं महसूस होता बल्कि राजभवन जैसा ही आनंद मिलता है।

विशेष :

1. उपर्युक्त अंश की पहली पंक्ति में कवि ने मानवीकरण का सुंदर प्रयोग किया है।
2. प्रकृति की नैसर्गिक सुषमा का मनोरम चित्रण हुआ है।
3. मानव और प्रकृति के अभिन्न संबंध को भी इस पद से जाना जा सकता है।
4. सीता के पारंपरिक देवी रूप की बजाय उसे मनुष्य रूप में प्रस्तुत किया गया है।
5. खड़ी बोली कविता का सहज और सुंदर रूप इन पंक्तियों में मौजूद है।
6. किसलय, स्वागत, मृदु, तृण, मुक्ता, निधि, प्रकृति जैसे तत्सम शब्दों का प्रयोग है।

तीन

गुरुजन-परिजन सब धन्य ध्येय हैं मेरे,
औषधियों के गुण-विगुण[13] ज्ञेय[14] हैं मेरे
वन-देव-देवियाँ आतिथेय हैं मेरे,
प्रिय-संग यहाँ सब प्रेय श्रेय है मेरे।

मेरे पीछे ध्रुव[15] -धर्म स्वयं ही धाया,
मेरी कुटिया में राज-भवन मन भाया।

संदर्भ और प्रसंग : पूर्ववत

व्याख्या : चित्रकूट की शोभा और सम्पदा से सीता गदगद हैं। सीता अपने गुरुजनों और आत्मीय लोगों को धन्य समझती हैं जो उनके ध्येय में हैं। औषधीय गुणों से परिपूर्ण पेड़-पौधों को सीता पहचान चुकी हैं। वन के देवी-देवताओं की आतिथेयता से वे परम प्रसन्न हैं। सबसे बड़ी बात यह है कि सीता अपने पति के साथ हैं। इसलिए यहाँ उन्हें सब कुछ उन्हें प्रिय लगता है। चित्रकूट का सब कुछ उन्हें श्रेष्ठ लगता है। यह एक मनोवैज्ञानिक तथ्य है कि चित्त प्रसन्न हो तो मनुष्य को दुख-कष्ट भी नहीं सालते। उसे सब कुछ प्रेममय और आनंदमय प्रतीत होता है। चित्रकूट के सघन वन में भी सीता अपने पति के साथ होने के कारण न केवल वह संतुष्ट हैं बल्कि परम प्रसन्न भी हैं। राम के साथ रहने का आशय है कि अटल धर्म भी उन्हीं का पीछा कर रहा है। इसीलिए सीता को धर्म-अधर्म की चिंता में चिंतित होने की क्या आवश्यकता है? सीता कहती हैं अर्थात कवि कहता है कि उन्हें अपनी कुटिया में किसी तरह का अभाव नहीं महसूस होता बल्कि राजभवन जैसा ही आनंद मिलता है।

विशेष :

1. इस पद में चित्रकूट पर्वत के औषधीय गुणवाले वृक्षों और लता-गुल्मों की प्रशंसा की गई है।
2. सीता के पारंपरिक देवी रूप की बजाय उसे मनुष्य रूप में प्रस्तुत किया गया है।
3. भारतीय परंपरा में विश्वास है कि पति के साथ पत्नी कहीं भी रहे तो उसे परम संतोष की प्राप्ति होती है।
4. खड़ी बोली का सहज और स्वाभाविक प्रयोग मिलता है।
5. लोकविश्वास है कि वन में रहने वाले सभी प्राणियों की रक्षा वनदेवी और वनदेवता करते हैं।

(आपके के लिए 'साकेत' के अध्येतव्य पाठ में से तीन पदों की व्याख्याएँ प्रस्तुत की गई हैं। आशा है कि अब आप 'साकेत' के अन्य पदों की व्याख्या स्वयं कर सकेंगे। दिये गए शब्दार्थ की सहायता ले सकते हैं।)

बोध प्रश्न 1

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर संक्षेप में दें।

1. 'यशोधरा' के दुख का कारण क्या है ? अपने शब्दों में लिखिए।

.....

.....

.....

2. यशोधरा की कोई दो चारित्रिक विशेषताएँ स्पष्ट कीजिए।

.....

.....

.....

3. चित्रकूट में पक्षी जगत से सीता के संबंध का परिचय दीजिए।

.....

.....

.....

4. चित्रकूट के प्राकृतिक सौंदर्य पर एक संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।

.....

.....

.....

अभ्यास :

1. पठित कविताओं के आधार पर मैथिलीशरण गुप्त की नारी चेतना का सोदाहरण विवेचन कीजिए।

13.4 'अन्वेषण' के चयनित अंशों की व्याख्या

द्विवेदी युगीन, किन्तु द्विवेदी-मण्डल से बाहर रहकर अपने समग्र-साहित्य द्वारा एक विशिष्ट एवं अन्यतम स्थान बना लेने वाले इस महान कवि रामनरेश त्रिपाठी के जीवन, व्यक्तित्व और कृतित्व का गहन अध्ययन आपने कर लिया होगा। अब आपके पाठ्यक्रम में निर्धारित त्रिपाठी जी द्वारा विरचित दो कविताएँ 'अन्वेषण' एवं 'वह देश कौन-सा है?' सर्वप्रथम इन कविताओं का गम्भीरता से वाचन करें और तदुपरान्त इसके प्रमुख अंशों की सप्रसंग व्याख्या। साधारण एवं सरल अंशों की व्याख्या का प्रयास आप स्वयं करें। तो आइए, सर्वप्रथम 'अन्वेषण' कविता वाचन करें।

काव्य वाचन तथा संदर्भ सहित व्याख्या

अन्वेषण

मैं ढूंढता[1] तुझे था जब कुंज और वन में,
तू खोजता मुझे था तब दीन के वतन में,

तू आह बन किसी की मुझको पुकारता था।
मैं था तुझे बुलाता संगीत में, भजन में।

मेरे लिए खड़ा था दुखियों के द्वारा पर तू,
मैं बाट जोहता[2] था तेरी किसी चमन में।

बन कर किसी के आँसू मेरे लिए बहा तू,
मैं देखता तुझे था माशूक[3] के बदन में।

दुख से रूला-रूलाकर तुने मुझे चिताया[4],
मैं मस्त हो रहा था तब हाय। अंजुमन[5] में।

बाजे बजा-बजाकर मैं था तुझे रिझाता,
तब तू लगा हुआ था पतितों[6] के संगठन मे।

मैं था विरक्त[7] तुझसे जग की अनित्यता[8] पर,
उत्थान भर रहा था तब तू किसी पतन में।

तू बीच में खड़ा था बेबस गिरे हुओं के,
मैं स्वर्ग देखता था, झुकता कहां चरण में?

हरिश्चंद्र और ध्रुव ने कुछ और ही बताया,
मैं तो समझ रहा था तेरा प्रताप[9] धन में।

तेरा पता सिकन्दर को मैं समझ रहा था।
पर तू बसा हुआ था फ़रहाद कोहकन में[10]

क्रीसस की ''हाय'' में था करता विनोद तू ही,
तू ही विहँस रहा था महमूद[11] के सदन में।

प्रह्लाद जानता था तेरा सही ठिकाना,
तूही मचल रहा था सुहराब पील-तन में।

कैसे तुझे मिलूँगा जब भेद इस कदर है?
हैरान होके भगवन। आया हूँ मैं सरन में।

तू रूप है किरन में सौन्दर्य है सुमन में,
तू प्राण है पवन में, विस्तार है गगन में।

ज्ञान हिन्दुओं में, ईमान मुसलिमों में,
विश्वास क्रिश्चियन में, तू सत्य है सुजन में।

हे दीनबन्धु। ऐसी प्रतिभा प्रदान कर तू,
देखूँ तुझे -दृगों में, मन में तथा बचन में।

कठिनाइयों, दुखों का इतिहास ही सुयश है,
मुझको समर्थ कर तू बस कष्ट के सहन में।

दुख में न हार मानूँ, मुख में तुझे न भूलूँ
ऐसा प्रभाव भर दे, मेरे अधीर[12] मन में।

(स्फुट)

शब्दार्थ :

1.खोज 2. इंतजार करना 3. प्रेमिका 4. जगाना या याद दिलाना 5. महफिल या मजलिस 6. गिरे हुए 7. उदासीन 8. अस्थिरता 9. ताकत 10. पहाड़ खोदकर नहर निकालने वाले (शीरी-फरहाद के नायक) में 11. जो स्तुत्य या प्रशसनीय हो 12. बेचैन या धैर्यहीन

एक

"मैं ढूंढता तुझे था..... बदन में।"

संदर्भ और प्रसंग :

उपर्युक्त पंक्तियों में कवि पं. रामनरेश त्रिपाठी ने यह कहना चाहा है कि मनुष्य अपने भीतर परमात्मा को न खोजकर बाहर वन और उपवन में खोजता रहता है, जबकि परमात्मा स्वयं दीन-दुखियों के लोक में मानव की खोज करता रहता है।

व्याख्या :

परमात्मा किसी गरीब-दुखी की आह में बसता है, जब वह हमसे मदद की गुहार लगाता है, जबकि हम उसे संगीत-भजन के माध्यम से याद करते रहते हैं। परमात्मा जब दुखियों के दरवाजे पर हमारी प्रतीक्षा कर रहा था कि हम अपने मानव होने का परिचय देंगे और गरीबों की मदद करेंगे तब हम उसकी प्रतीक्षा किसी बागीचे में कर रहे थे। परमात्मा किसी के आँसू में करुणा का प्रतिरूप बनकर हमारे समक्ष प्रकट हुआ, जबकि मनुष्य उसे प्रेमिका के शरीर में देख रहा था। कहना न होगा कि कवि लैला-मजनूं के प्रेम प्रसंग की ओर संकेत कर रहा है, जबकि परमात्मा का मानव के प्रति प्रेम अशरीरी और अलौकिक है। कवि का ऐसा मानना है कि परमात्मा हमें हमसे अधिक प्रेम करता है। उसे स्वयं के भीतर अन्वेषित किया जाना चाहिए। ऐसा करने पर हमें उसे किसी स्थान विशेष पर खोजने जाने की जरूरत नहीं रह जाएगी। वह इस सृष्टि के अणु-अणु में विद्यमान है। उसके लिए आडंबर की कोई आवश्यकता नहीं है।

विशेषः

1. उपर्युक्त पंक्तियों का साम्य निम्नलिखित पंक्तियों से देखा जा सकता है- "मोको कहाँ ढूंढे बंदे, मैं तो तेरे पास रे।"
2. कवि ने 'बाट जोहना' कहावत का प्रयोग सुंदर तरीके से किया है।
3. कवि ने तत्सम शब्दों के साथ विदेशज शब्दों का कहीं-कहीं मेल कराया है, जो द्विवेदी युग की काव्य-भाषा विषयक शुष्कता से उन्हें किंचित पृथक् ठहराता है।
4. इसके अलावा पूरी कविता में अंत्यानुप्रास अलंकार का भी सुंदर प्रयोग हुआ है।

दो

"दुख से रुला-रुलाकर..... चरन में?

व्याख्या :

उपर्युक्त पंक्तियों में कवि पं. रामनरेश त्रिपाठी ने यह कहना चाहा है कि दुख में रुला-रुलाकर परमात्मा ने ही मानव को जागृत किए रखा जबकि मनुष्य तब अपनी मजलिस जुटाने में व्यस्त था। यह मानव को करुणा के प्रति संवेदनशील बनाने का प्रश्न भी है। मानव जब वाद्य-यंत्रों को बजा-बजाकर परमात्मा को प्रसन्न करने की जुगत भिड़ा रहा था, तब परमात्मा पतितों-दलितों के त्राण में जुटा हुआ था। मानव जब जग की अस्थिरता या क्षणभंगुरता के प्रति उदासीनता का अनुभव कर रहा था, तब परमात्मा पतन के मध्य उत्थान के बारे में सोच रहा था। परमात्मा जब जीवन में हारे हुए लोगों के बीच आशा की किरण बनकर आविर्भूत हुआ था, तब भी मानव उसके स्वर्ग में होने की उम्मीद कर रहा था। वह यही सोच रहा था कि स्वर्ग में कैसे उस तक पहुँचा जाए या कि स्वर्ग को कहाँ खोजा जाए।

विशेषः

1. 'बाजे बजा-बजाकर' में अनुप्रास अलंकार की छटा दर्शनीय है।
2. 'बजा-बजाकर' में पुनरुक्तिप्रकाश अलंकार की छटा दर्शनीय है।
3. उपर्युक्त पंक्तियों में कवि का इहलौकिक दृष्टिकोण दर्शनीय है।
4. कवि ने तत्सम शब्दों के साथ विदेशज शब्दों का कहीं-कहीं मेल कराया है, जो द्विवेदी युग की काव्य-भाषा विषयक शुष्कता से उन्हें किंचित पृथक् ठहराता है।
5. इसके अलावा पूरी कविता में अंत्यानुप्रास अलंकार का भी सुंदर प्रयोग हुआ है।

तीन

"हरिश्चंद्र और.....पील तन में।"

व्याख्या :

उपर्युक्त पंक्तियों में कवि पं. रामनरेश त्रिपाठी ने यह कहना चाहा है कि राजा हरिश्चंद्र और ध्रुव की कथा यह संदेश देती है कि सत्य और निस्वार्थ भक्ति से ही परमात्मा को पाया जा सकता है। उसकी अनुकंपा को धन-संपदा से जोड़कर देखना अनुचित है। मानव ईश्वर की कल्पना विश्व विजेता सिकंदर की तरह करता है, जबकि ईश्वर तो फरहाद की तरह पहाड़ खोदकर नहर निकालने को ही श्रेयस्कर समझ रहा था। परमात्मा यीशू की हाय में विद्यमान था क्योंकि उन्होंने सारे संसार का अपराध स्वयं में धारण कर लिया, जबकि उन्हें सलीब पर चढ़ा दिया गया। इसके बावजूद उन्होंने संसार के सारे अपराधों को क्षमा कर दिया। परमात्मा ही इस संसार रूपी स्तुत्य सदन में विहँस रहा था। वह रुदन-करुणा और विहास का प्रतिरूप है। कवि यह कहना चाहते हैं कि भक्त प्रह्लाद परमात्मा का सही ठिकाना जानते थे क्योंकि परमात्मा उनके मन में ही था। इसके अलावा परमात्मा ही सुहराब के तन में बसता था। कहना न होगा कि कवि यह संकेत कर रहा है कि परमात्मा हमारे मन में ही विद्यमान है। यदि हमारा अंतःकरण शुद्ध है तो वह हमारे समीप ही है।

विशेषः

1. कवि ने तत्सम शब्दों के साथ विदेशज शब्दों का कहीं-कहीं मेल कराया है, जो द्विवेदी युग की काव्य-भाषा विषयक शुष्कता से उन्हें किंचित पृथक् ठहराता है।
2. उपर्युक्त पंक्तियों का साम्य निम्नलिखित पंक्तियों से देखा जा सकता है- "मोको कहाँ ढूंढे बंदे, मैं तो तेरे पास रे।"
3. इसके अलावा पूरी कविता में अंत्यानुप्रास अलंकार का भी सुंदर प्रयोग हुआ है।

चार

"कैसे तुझे..... अधीर मन में।

व्याख्या :

उपर्युक्त पंक्तियों में कवि पं.रामनरेश त्रिपाठी ने यह कहना चाहा है कि जब इस संसार में इतना भेद-वैषम्य है तो ईश्वर की शरण में जाने के अलावा और कहाँ जाया जा सकता है। ईश्वर रूप-किरण है। वही सुमन के सौंदर्य में बसता है। वह प्राण-वायु के समान है तथा आकाश के समान अनंत है। वही हिंदुओं की चेतना, मुसलमानों का ईमान, ईसाइयों का विश्वास और सुजन का सत्य है। कवि परमात्मा, जो गरीब-नवाज है, से यह प्रार्थना करता है कि वह उसे ऐसी प्रतिभा प्रदान करे कि कवि उसे (परमात्मा को) अपने मन, वचन और अपनी आँखों में बसा ले। कवि यह वरदान मांगता है कि वह कष्ट सहन करने में सक्षम बने क्योंकि जिसने जीवन में कठिनाइयाँ और दुरूख नहीं देखा, वह छोटी-सी समस्याओं से भी घबरा जाता है। कवि यह इच्छा रखता है कि परमात्मा उसके अधीर मन को ऐसा बना दे कि वह दुःख में कभी न हारे और सुख में भी परमात्मा को याद करे। आलोच्य पंक्तियों में कवि ने ईश्वर को लेकर किए जाने वाले अंधविश्वास और बाह्याचारों का विरोध किया है।

विशेषः

1. कवि ने तत्सम शब्दों के साथ विदेशज शब्दों का कहीं-कहीं मेल कराया है, जो द्विवेदी युग की काव्य-भाषा विषयक शुष्कता से उन्हें किंचित पृथक् ठहराता है।

2. उपर्युक्त पंक्तियों का साम्य निम्नलिखित पंक्तियों से देखा जा सकता है-

"दुख में सुमिरन सब करे, सुख में करे न कोय।
जो सुख में सुमिरन करे, दुख काहे को होय।"

3. इसके अलावा पूरी कविता में अंत्यानुप्रास अलंकार का भी सुंदर प्रयोग हुआ है वह देश कौन सा है।

13.5 'वह देश कौन सा है' के चयनित अंशों की व्याख्या

मनमोहिनी[1] प्रकृति की जो गोद में बसा है,
सुख स्वर्ग-सा जहाँ है, वह देश कौन-सा है?

जिसका चरण निरन्तर रत्नेश[2] धो रहा है,
जिसका मुकुट हिमालय, वह देश कौन-सा है?

नदियाँ जहाँ सुधा[3] की धारा बहा रही है
सींचा हुआ सलोना, वह देश कौन-सा है?

जिसके बड़े रसीले फल, कंद, नाज, मेवे,
सब अंग में सजे हैं, वह देश कौन-सा है?

जिसके सुगंध वाले सुन्दर प्रसून[4] प्यारे,
दिन-रात हँस रहे हैं, वह देश कौन-सा है?

मैदान, गिरि, वनों में हरियालियाँ लहकतीं[5]
आनंदपथ जहाँ हैं, वह देश कौन -सा है?

जिसकी अनंत धन से धरती भरी पड़ी है,
संसार का शिरोमणि[6] वह देश कौन-सा है?

सबसे प्रथम जगत में जो सभ्य था यशस्वी,
जगदीश का दुलारा वह देश कौन-सा है?

पृथ्वी निवासियों को जिसने प्रथम जगाया,
शिक्षित किया, सुधारा, वह देश कौन-सा है?

जिसमें हुए अलौकिक तत्वज्ञ ब्रह्म ज्ञानी,
गौतम, कपिल, पतंजल, वह देश कौन-सा है?

छोड़ स्वराज तृणवत[7] आदेश से पिता के,
वह राम थे जहाँ पर, वह देश कौन-सा है?

निस्वार्थ शुद्ध प्रेमी भाई भले जहाँ थे,
लक्ष्मण भरत सरीखे, वह देश कौन-सा है?

आदर्श नर जहाँ पर थे बाल ब्रह्मचारी,
हनुमान, भीष्म, शंकर वह देश कौन-सा है?

विद्वान् वीर, योगी, गुरू राजनीतिकों के,
श्रीकृष्ण थे जहाँ पर, वह देश कौन-सा है?

विजयी बली जहाँ के बेजोड़ शूरमा थे,
गुरू, द्रोण, भीम, अर्जुन, वह देश कौन-सा है?

जिसमें दधीचि, दानी हरिश्चंद्र, कर्ण से थे,
सब लोक का हितैषी वह देश कौन-सा है?

वाल्मीकि व्यास ऐसे जिसमें महान् कवि थे,
श्रीकालिदास वाला वह देश कौन-सा है?

निष्पक्ष[8] न्यायकारी जन जो पढ़े लिखे हैं,
वे सब बता सकेंगे, वह देश कौन-सा है?

हैं तीस कोटि[9] भाई, सेवक, सपूत जिसके,
भारत सिवाय दूजा वह देश कौन-सा है।

शब्दार्थ :

1. मन को मोहने वाली 2. समुद्र 3. अमृत 4. फल-फूल 5. लहराती 6. मस्तक पर धारण करने योग्य 7. तिनके के समान 8. तटस्थ या बिना किसी पक्षपात के 9. करोड़

एक

"मनमोहिनी प्रकृति की.....वह देश कौन-सा है?"

व्याख्या :

उपर्युक्त पंक्तियों में कवि पं.रामनरेश त्रिपाठी ने यह कहना चाहा है कि मन को मोहित करने वाली प्रकृति की गोद में भारत ही बसा है। यही वह देश है, जहाँ स्वर्गीय सुख विद्यमान हैं। यही वह भारत-भूमि है, जिसके पाँव सागर पखारता है। यही वह भारत देश है, जिसका मुकुट हिमालय जैसा विश्व का सबसे महान पर्वत है। अनंत काल से नदियाँ इस देश में अमृत की धारा प्रवाहित करती रही हैं। उनके द्वारा सींचकर यहाँ की मिट्टी को उपजाऊ बनाया जाता रहा है। इस मिट्टी में बड़े ही रसीले फल होते हैं। यहाँ के कंद-मूल, अनाज और मेवे सब मिलकर इस माटी की महिमा की श्रीवृद्धि करते हैं। यही वह देश है, जहाँ सुंदर पुष्प दिन-रात विहँसते रहते हैं। यहाँ के मैदानों, पर्वतों एवं वनों में हरियाली कुछ उसी प्रकार लहकती रहती है, जिस प्रकार अग्नि बढ़ती हुई बड़ी तीव्रता से प्रांतर को अपने कब्जे में ले लेती हैय यहाँ आनंदपथ चतुर्दिक व्याप्त हैं। कहना न होगा कि ऐसे सुख की परिकल्पना भारत-भूमि पर ही की जा सकती है। संबंधित अवतरण में कवि का देश-प्रेम स्पष्टतः देखा जा सकता है।

विशेषः

1. कवि ने तत्सम शब्दों का यहाँ सुंदर प्रयोग किया है, जो द्विवेदी युग की काव्य-भाषा की अपनी विशेषता है।
2. संदर्भित पंक्तियों में प्रकृति-सौंदर्य का अद्‌भुत नियोजन हुआ है।
3. उपर्युक्त पंक्तियों में विशेषण और विशेष्य के कई सुंदर प्रयोग दर्शनीय हैं-रसीले फल, सुंदर प्रसून आदि दृष्टव्य हैं।
4. इसके अलावा पूरी कविता में अंत्यानुप्रास अलंकार का भी सुंदर प्रयोग हुआ है।

दो

"जिसकी अनंत धन से .....पतंजल, वह देश कौन-सा है?"

व्याख्या :

उपर्युक्त पंक्तियों में कवि पं. रामनरेश त्रिपाठी ने यह कहना चाहा है कि भारत की धरती अनंत धनराशि से संपन्न है। भारत संसार के सब देशों का शिरोमणि है क्योंकि यह देश

तब सभ्य था, जब संसार में सभ्यता का अता-पता तक नहीं था। इन पंक्तियों में कवि सिंधु घाटी की सभ्यता की बात उठाता है। यहाँ कवि ने अंग्रेजी साम्राज्यवादी शक्तियों की इस बात का स्पष्टतः उत्तर दिया है कि भारत का वे उपकार करते हैं, जब वे यहाँ शासन करते हैं क्योंकि भारतीय असभ्य हैं। वे स्वयं पर शासन नहीं कर सकते हैं। अंग्रेजों का ऐसा मानना असत्यपरक एवं छल-छद्मयुक्त था। कवि के अनुसार वास्तविकता यह है कि भारत देश ईश्वर का दुलारा देश है, इसने जगत-गुरु बनकर संसार को जागृत किया है। इसने संसार को शिक्षित किया एवं उसे सुधारा भी। इस देश के दर्शन मानवता के लिए बहुत ही महत्वपूर्ण रहे हैं। यह ऋषियों-मनीषियों की भूमि रही है। ये तत्त्व-ज्ञानी, ब्रह्म ज्ञानी हुआ करते थे। इस देश ने गौतम, कपिल, पतंजलि जैसे वरीय जनों को पैदा किया। यह भूमि महत्व है।

विशेष :

1. कवि ने तत्सम शब्दों का यहाँ सुंदर प्रयोग किया है, जो द्विवेदी युग की काव्य-भाषा की अपनी विशेषता है।

2. उपर्युक्त पंक्तियों में भारत की गौरवमयी चिंताधारा का जिक्र हुआ है।

3. इसके अलावा पूरी कविता में अंत्यानुप्रास अलंकार का भी सुंदर प्रयोग हुआ है।

तीन

"छोड़ स्वराज तृणवत ..... अर्जुन, वह देश कौन-सा है?

व्याख्या :

उपर्युक्त पंक्तियों में कवि पं.रामनरेश त्रिपाठी ने यह कहना चाहा है कि यह वही देश है, जहाँ भगवान श्री राम ने अपने पिता दशरथ के आदेश पर स्वराज को तिनके की तरह त्याग दिया था। उनके भाई लक्ष्मण एवं भरत 'भायप (भ्रातृ) भक्ति' के अतुल्य उदाहरण हैं। संसार ने राज-पाठ हेतु भाइयों के बीच गृह-कलह होते देखा है। यहाँ तक कि भाइयों में परस्पर युद्ध भी छिड़ते देखा है, जबकि राम के भाइयों ने राम की पादुका राजगद्दी पर रखकर उनकी अमानत को संभालने के रूप में राज-काज किया। इस भारत-भूमि पर हनुमान, भीष्म, शंकर जैसे ब्रह्मचारियों और योगियों का भी जन्म हुआ है। इस देश में विद्वान, वीर, योगी, महत्वपूर्ण राजनयिक भी पैदा हुए, जिनका लोहा दुनिया ने माना। श्री कृष्ण, गुरु द्रोण, भीम, अर्जुन जैसे देवों तथा महामानवों ने इस धरती पर जन्म लेकर इसका अलंकरण किया। ये शौर्य एवं वीरता, विनयशीलता, कर्मयोग के साक्षात् स्वरूप थे। ये परम बली विजेता थे। कहना न होगा कि कवि ने यहाँ भारत देश के स्वर्णिम अतीत एवं उसकी महिमा का गुणगान किया है।

विशेषः

1. कवि ने तत्सम शब्दों का यहाँ सुंदर प्रयोग किया है, जो द्विवेदी युग की काव्य-भाषा की अपनी विशेषता है।

2. उपर्युक्त पंक्तियों में भारत के गौरवमयी अतीत एवं परंपरा का जिक्र हुआ है।

3. इसके अलावा पूरी कविता मे अंत्यानुप्रास अलंकार का भी सुंदर प्रयोग हुआ है।

चार

"जिसमें दधीचि ..... दूजा वह देश कौन-सा है?"

व्याख्या :

उपर्युक्त पंक्तियों में कवि पं. रामनरेश त्रिपाठी ने यह कहना चाहा है कि भारत एक ऐसा देश है जहाँ एक से बढ़कर एक दानी, न्यायप्रिय और कलात्मक प्रतिभा से युक्त नरपुंगव पैदा हुए हैं। इस धरा ने दधीचि, राजा हरिश्चंद्र, कर्ण जैसे दानवीर-सत्यप्रिय पुरुष पैदा किए, जो लोक-कल्याण को सर्वोपरि रखने वाले लोग थे। इस धरती ने वाल्मीकि, व्यास तथा कालिदास जैसे महाकवियों को भी जन्म दिया। यह धरा शिक्षित, निष्पक्ष तथा न्यायप्रिय लोगों की धरा रही है। ये सुधीजन यह बता सकेंगे कि संसार में इतनी विविधताओं वाला देश एकमात्र भारत ही है। इस देश के लोग एक परिवार के समान रहते हैं, जहाँ करोड़ों लोग भाई, सेवक और सपूत की तरह इस देश के साथ हैं। संसार में भारत देश उपर्युक्त कारणों से इकलौता और अनोखा है। इतनी विविधताओं के कारण ही इसे प्रायद्वीप तक कहा गया। विश्व में किसी भी देश में इतनी अधिक संस्कृतियाँ, भाषाएँ, भौगोलिक विविधताएँ विरल हैं। ऐसा एक महादेश में भी मिल जाए, तो भी चकित ही हुआ जा सकता है। यह देश अनेकता में एकता का अत्यंत ही उत्कृष्ट उदाहरण है। कवि इस देश के प्रति अपने उद्‌गारों को लेकर बहुत ही निष्ठावान है। यहाँ कवि ने अंग्रेजी साम्राज्यवादी शक्तियों की इस बात का स्पष्टतः उत्तर दिया है कि भारत का वे उपकार करते हैं, जब वे यहाँ शासन करते हैं क्योंकि भारतीय असभ्य हैं वे स्वयं पर शासन नहीं कर सकते हैं। अंग्रेजों का ऐसा मानना असत्यपरक एवं छल-छद्‌मयुक्त था। यह देश प्राचीन काल से आत्मसंभव है।

विशेष :

1. कवि ने तत्सम शब्दों का यहाँ सुंदर प्रयोग किया है, जो द्विवेदी युग की काव्य-भाषा की अपनी विशेषता है।
2. उपर्युक्त पंक्तियों में कवि की देशभक्ति का दर्शन स्पष्टतः किया जा सकता है। कवि इस देश के कण-कण को प्यार करता है।
3. 'सेवक-सपूत' में अनुप्रास अलंकार की छटा दर्शनीय है। इसके अलावा पूरी कविता में अंत्यानुप्रास अलंकार का भी सुंदर प्रयोग हुआ है।
4. उपर्युक्त पक्तियों में परिवर्तन एवं विविधताओं के प्रति कवि का सकारात्मक -दृष्टिकोण देखा जा सकता है।

बोध प्रश्न-1

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर संक्षेप में दें।

1. कवि ने कहाँ-कहाँ ईश्वर का अन्वेषण किया है ?

   .....

   .....

   .....

2. कवि को ईश्वर किस रूप में और कहाँ मिलता है ?

   .....

   .....

   .....

   .....

3. कवि के राष्ट्रप्रेम की भावना का संक्षेप में वर्णन कीजिए।

.....

.....

.....

4. 'वह देश कौन सा है' कविता के आधार पर कवि की आदर्श चेतना पर एक संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।

.....

.....

.....

अभ्यास :

1. पठित कविताओं के आधार पर राम नरेश त्रिपाठी की काव्यगत विशेषताओं का सोदाहरण उल्लेख कीजिये।

13.6 सारांश :

- आपने मैथिली शरण गुप्त के दो प्रसिद्ध काव्य ग्रन्थों के चयनित अंशों का पाठ किया। इन अंशों के माध्यम से आपने जाना कि कवि ने खड़ी बोली में काव्य रचना को संभव किया। इसे काव्य की भाषा बनाते हुए उन्होने कविता की भाषा के संदर्भ में होने वाले तमाम विवादों को समाप्त किया। उपेक्षित स्त्री पात्रों को काव्य जगत में प्रतिष्ठित किया तथा कुछ मिथकीय पात्रों के संबंध में प्रचलित मान्यताओं को नए रूपों में प्रतिष्ठित किया। इनकी कविताओं में तत्कालीन देश-काल की प्रतिध्वनि स्पष्टतया सुनी जा सकती है। भारतीय जीवन आदर्श के महत्वपूर्ण तत्वों को उन्होने काव्य के साँचे में ढाल कर तत्कालीन समाज को जीवन मूल्यों की ओर प्रेरित किया है। आपने यह भी देखा कि सीता हो या यशोधरा, इनमें त्याग और उत्सर्ग की भावना के साथ-साथ स्वाभिमान, स्वतंत्र चेतना आदि के भाव भी भरे हुए हैं। निस्संदेह, मैथिली शरण गुप्त हिंदी के प्रतिनिधि कवि हैं।
- यह इकाई पढ़ने के बाद पं. रामनरेश त्रिपाठी की काव्य संवेदना के बारे में आपकी एक अवधारणा का विकास हुआ होगा। परतंत्र भारत में आमजन में देश भक्ति अथवा राष्ट्र प्रेम की भावना उद्‌बुद्ध करना तत्कालीन रचनाकारों का मुख्य ध्येय था। इस संदर्भ में रामनरेश त्रिपाठी के महत्व को आप समझ सकते हैं। भारतीय प्रकृति, खेत, खलिहान, संपदा, इतिहास, संस्कृति एवं इतिहास-पुरुषों की स्मृति एवं प्रशस्ति में लिखी गई कविताओं में कवि की अनन्यता को भी आप रेखांकित कर सकते हैं। आपने यह भी समझा कि युगीन परिवेश में भटके लोगों को कवि ने किस खूबी से सन्मार्ग दिखाया और पथ-प्रदर्शक की भूमिका निभाई है।

13.7 उपयोगी पुस्तकें

पुस्तकें :

1. रामनरेश त्रिपाठी : व्यक्तित्व और कृतित्व : के. गोपालन नायर
2. हिंदी के गौरव रामनरेश त्रिपाठी : हिंदी भवन, दिल्ली
3. हिंदी साहित्य का इतिहास : आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी

इकाई 14 काव्य वाचन एवं विश्लेषण : जयशंकर प्रसाद

इकाई रूपरेखा

14.0 उद्देश्य

14.1 प्रस्तावना

14.2 चयनित कविताओं का पाठ और विश्लेषण

14.3 सारांश

14.4 उपयोगी पुस्तकें

14.5 बोध प्रश्नों/अभ्यासों के उत्तर

14.0 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आपः

- जयशंकर प्रसाद की चयनित कविताओं की विस्तृत व्याख्या समझ सकेंगे;
- जयशंकर प्रसाद की कविताओं की व्याख्या की दिशाओं को जान सकेंगे;
- इन कविताओं के माध्यम से छायावाद की विशिष्टताओं को जान सकेंगे;
- जयशंकर प्रसाद की काव्य-भाषा को समझने का प्रयास करेंगे और
- जयशंकर प्रसाद की शब्द-योजना काव्य सौश्ठव और शब्दावली को जान सकेंगे।

14.1 प्रस्तावना

जयशंकर प्रसाद का जन्म 30 जनवरी, 1889 ई को बनारस में हुआ था। उनके पूर्वज कानपुर के रहनेवाले थे जिन्होंने व्यवसाय को ध्यान में रखकर बनारस में रहने का निर्णय लिया था। जयशंकर प्रसाद की औपचारिक शिक्षा केवल छठी-सातवीं कक्षा तक बनारस के क्वींस कॉलेज में हुई थी। केवल 48 साल की उम्र में 15 नवम्बर, 1937 ई को प्रसाद जी की मृत्यु हो गयी थी। उन्होंने अल्पायु के बावजूद विपुल साहित्य रचा था। उनकी रचनाओं की सूची इस प्रकार है -

काव्य-कृतियाँ : चित्राधार (1918/1928), कानन-कुसुम (1913/1929), प्रेमपथिक (ब्रजभाषा-1909), प्रेमपथिक (खड़ी बोली हिंदी-1914), महाराणा का महत्त्व (1914), झरना (1918), आँसू (1925/1933), लहर (1935), कामायनी (1936)

नाट्य-कृतियाँ : उर्वशी (1909), सज्जन (1910), वभ्रुवाहन (1911), कल्याणी परिणय (1912), करुणालय (1912), प्रायश्चित (1914), राज्यश्री (1915), विशाख (1921), अजातशत्रु (1922), जन्मेजय का नाग-यज्ञ (1924), कामना (1927), एक घूँट (1929), स्कन्दगुप्त (1928), चन्द्रगुप्त (1931), ध्रुव स्वामिनी (1933), अग्निमित्र (अपूर्ण)

कहानी-संग्रह : छाया (1912/1918), प्रतिध्वनि (1925), आकाशदीप (1929), आँधी (1931), इन्द्रजाल (1936),

कथा प्रबन्ध : ब्रह्मर्षि (1910), पंचायत (1910)

उपन्यास : कंकाल(1930), तितली(1934), इरावती (अपूर्ण, मरणोपरांत 1940 में प्रकाशित)

निबन्ध : काव्य और कला तथा अन्य निबन्ध (मरणोपरांत 1939 में प्रकाशित)

जयशंकर प्रसाद छायावाद के चार श्रेष्ठ कवियों में से एक हैं। उनके लेखन-काल का अधिकांश छायावाद (1918-1936) के दौर से जुड़ा था। निराला, पन्त और महादेवी की तुलना में जयशंकर प्रसाद ने, परिमाण की दृष्टि से, सबसे ज्यादा छायावादी साहित्य की रचना की थी। उन्होंने कविता, नाटक, कहानी, उपन्यास और आलोचना में उच्च कोटि की रचनाएँ दीं।

प्रसादजी की कविताएँ मूलतः रोमानी हैं। छायावाद की प्रायः सभी विशेषताओं को अपने में समेटे हुए उनकी कविताएँ 'कामायनी' में शैव-दर्शन के आनंदवाद तक भी पहुँचती हैं। 'कामायनी' को न केवल छायावाद में, बल्कि हिंदी कविता के इतिहास में विशेष प्रतिष्ठा प्राप्त हुई है। प्रसाद ने ऐतिहासिक नाटकों की रचना की, मगर इन नाटकों में अपने वर्तमान को व्यक्त करने की अद्‌भुत क्षमता मौजूद है। उन्होंने 'तितली' और 'कंकाल' नामक उपन्यासों में यथार्थ-चित्रण का ध्यान रखा है। उनके उपन्यास रोमानियत के बजाय यथार्थ की तरफ उन्मुख हैं। प्रसाद की कहानियों में रोमानियत और यथार्थ - दोनों रूप मिलते हैं। उनके आलोचनात्मक आलेखों में प्रायः साहित्य की अवधारणात्मक समझ को सुलझाने का प्रयास दिखाई पड़ता है।

14.2 चयनित कविताओं का पाठ और विश्लेषण

एक

बीती विभावरी जाग री
अम्बर पनघट में डुबो रही-
तारा-घट ऊषा नागरी ।
खग-कुल कुल-कुल सा बोल रहा,
किसलय का अंचल डोल रहा,
लो यह लतिका भी भर लाई-
मधु मुकुल नवल रस गागरी।
अधरों में राग अमंद पिये,
अलकों में मलयज बंद किये,
तू अब तक सोई है आली।
आँखों में भरे विहाग री।

सन्दर्भ और प्रसंग

'बीती विभावरी जाग री' शीर्षक कविता 'लहर' काव्य-संग्रह में संगृहीत है। 'लहर' का पहला प्रकाशन 1935 ई- में हुआ था। यह कविता एक जागरण गीत है। एक युवती अपनी सोई हुई सखी को सुबह-सुबह जगा रही है। इसमें सामान्य जागरण-भाव के साथ वियोग का शृंगारिक प्रसंग भी जुड़ा हुआ है, जो कविता की अंतिम पंक्तियों में स्पष्ट होता है।

व्याख्या

युवती अपनी सोई हुई सखी से कह रही है कि हे सखि। रात बीत चुकी है अब तुम जाग जाओ। वह प्रेरित करती हुई आगे कहती है कि देखो पूरी प्रकृति अब क्रमशः जागरण की ओर बढ़ रही है। आकाश के तारे धीरे-धीरे डूब रहे हैं। ऐसा लग रहा है कि ऊषा (सुबह) एक समझदार स्त्री की तरह है जो खूब सबेरे पनघट पर पानी भरने के लिए आ गयी है। वह स्त्री अपने घड़ों को पनघट पर डुबो कर पानी भर रही है। यूँ कहें कि अम्बर-रूपी पनघट पर, तारे-रूपी घड़ों को, ऊषा-रूपी गृह-कार्य-दक्ष स्त्री डुबो रही है।

देखो सखि। पक्षी अपने झुण्ड-सहित कलरव कर रहे हैं। वे कुल-कुल की आवाज के साथ जाग रहे हैं। इसके अलावा पौधों के लाल-लाल नए पत्ते ऐसे झूम रहे हैं मानो वे हवा में लहराते आँचल हों। इस तरह पक्षी और पौधे अपनी जागृति का पूर्ण संकेत दे रहे हैं। मगर तुम अब तक सोई हुई हो। रात बीत चुकी है, अब जाग जाओ।

कल जिस कोमल लता को तुमने देखा था, वह आज कली से सजी हुई दिखाई पड़ रही है। इस लतिका में लगी हुई मधुर-मोहक कली ऐसी मालूम पड़ रही है, मानो रस से भरी हुई एक प्यारी-सी नयी गगरी हो। सखि! देखो प्रकृति ने कितना नया रूप धारण कर लिया है, मगर तुम अब तक सोई हुई हो।

इतना कहने के बाद युवती अपनी सोई हुई सखि के निजी प्रसंग का सांकेतिक उल्लेख करती है। वह चाहती है कि उसकी सखी का वियोग-जनित दुःख दूर हो। वह जागे और प्रकृति के उल्लास से जुड़कर अपने व्यक्तिगत दुःख को हल्का कर ले। वह कहती है कि सखि। रात में तुम्हारे होंठों पर जो लाली लगी थी, वह अभी तक जस की तस है। रात में तुमने अपने लम्बे बालों में जो सुगंधि लगाई थी और बालों को सजाया था, वह अभी तक वैसे ही है। जबकि पूरी रात बीत चुकी है। सखि। मैं सब समझ रही हूँ। तुम्हारी आँखों में विहाग का राग भरा हुआ दिखाई पड़ रहा है। यह राग बता रहा है कि तुम अपने प्रिय की प्रतीक्षा में रात के तीसरे प्रहर (रात 12 से 3 बजे) तक जगती रही हो। मैं जान गई हूँ कि प्रतीक्षा में व्याकुल होकर तुमने रात के तीसरे प्रहर में गाया जानेवाला विहाग का राग गाया होगा। और उसी राग का भाव अपनी आँखों में बसाए हुए निराश होकर तुम सो गयी होगी।

सखि! अब जाग जाओ। रात बीत चुकी है। देखो, पूरी प्रकृति जाग चुकी है। रात की शिथिलता और खुमारी को छोड़कर अब सब लोग जाग रहे हैं, तुम्हें भी जाग जाना चाहिए।

काव्य सौष्ठव/विशेष

यह जागरण गीत है। स्वतंत्रता आन्दोलन में व्याप्त जागृति के भाव को इसमें प्रकृति के माध्यम से व्यक्त किया गया है। यह गीत अंत में वियोग का भाव समेटे हुए है।

इसकी टेक की पंक्ति 'बीती विभावरी जाग री' में 15 मात्राएँ हैं। इस पंक्ति की तुकबंदी जिन पंक्तियों से हुई है, उनमें भी 15-15 मात्राएँ हैं। जैसे - तारा-घट ऊषा नागरी, मधु मुकुल नवल रस गागरी, आँखों में भरे विहाग री। शेष पंक्तियों में 16-16 मात्राएँ हैं।

कठिन शब्द

1. विभावरी- रात 2. अम्बर पनघट - आकाश मानो पनघट की तरह है 3. तारा-घट - सितारे मानो घड़े की तरह हैं 4. ऊषा नागरी - सुबह एक कुशल स्त्री की तरह है 5. खग-कुल - चिड़ियों का झुण्ड या समूह 6. कुल-कुल - चिड़ियों की सामूहिक आवाज के लिए प्रयुक्त शब्द 7. किसलय - नए पत्ते, पल्लव 8. अंचल - आँचल, दुपट्टा, चुनरी 9. लतिका - लता का अत्यंत कोमल रूप 10. मधु मुकुल - सुगंध से भरी कली 11. नवल रस - आस्वाद की ताजगी 12. गागरी - गगरा (घड़ा) का छोटा रूप 13. राग - रंग 14. अमंद - जिसकी चमक बनी हुई हो 15. अलकों - स्त्री के लम्बे बाल 16. मलयज - सुगंधि 17. आली - सखी 18. विहाग - रात्रि के तीसरे प्रहर (रात 12 से 3) में गाया जानेवाला वियोग का राग।

यह कविता मानवीकरण की सुंदरता से युक्त है। प्रकृति का भरपूर मानवीकरण छायावाद की एक प्रमुख विशेषता है।

बोध प्रश्न-1

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर संक्षेप में दें:

1. नायिका को जगाती हुई सखी तारों के बारे में क्या बता रही है?

.....

.....

.....

.....

2. 'बीती विभावरी जाग री' एक जागरण गीत क्यों है?

.....

.....

.....

.....

3. नीचे प्रश्न के साथ कुछ विकल्प दिए जा रहे है। उत्तर के लिए सही विकल्प को चिन्हित कीजिए।

i. 'बीती विभावरी जाग री' शीर्षक कविता किस पुस्तक में है?

क) झरना ख) लहर ग) आँसू घ) कामायनी

ii. 'बीती विभावरी जाग री' किस प्रकार का गीत है?

क) जागरण गीत ख) प्रयाण गीत ग) प्रार्थना घ) लोकगीत

iii. 'अंबर-पनघट' में कौन-सा अलंकार है?

क) उपमा ख) रूपक ग) रूपकातिशयोक्ति घ) उत्प्रेक्षा

iv. 'विहाग' का क्या अर्थ है?

क) सुबह ख) पक्षी ग) आकाश घ) एक राग का नाम

दो

ले चल वहाँ भुलावा देकर

ले चल वहाँ भुलावा देकर,
मेरे नाविक धीरे-धीरे ।

जिस निर्जन में सागर लहरी,
अम्बर के कानों में गहरी-
निश्छल प्रेम-कथा कहती हो,
तज कोलाहल की अवनी रे।

जहाँ साँझ-सी जीवन छाया,
ढीले अपनी कोमल काया,
नील नयन से ढुलकाती हो,
ताराओं की पाँति घनी रे।

जिस गंभीर मधुर छाया में-
विश्व चित्रपट चल माया में-
विभुता विभु-सी पड़े दिखाई
दुख-सुख वाली, सत्य बनी रे।

श्रम विश्राम क्षितिज वेला से-
जहाँ सृजन करते मेला से-
अमर जागरण उषा नयन से-
बिखराती हो ज्योति घनी रे।

सन्दर्भ और प्रसंग

प्रस्तुत कविता : गीत 'लहर' (1935ई-) काव्य-संग्रह में संगृहीत है। इस गीत की रचना 19 दिसम्बर 1931 ई- को जगन्नाथपुरी में हुई थी। इसका प्रथम प्रकाशन 11 फरवरी, 1932 ई- को साप्ताहिक पत्र 'जागरण' (बनारस) में हुआ था। जयशंकर प्रसाद की यह कविता 'पलायनवादी' होने के आरोप से जुड़ी रही है। इस कविता में प्रसाद नाविक (नियति, प्रारब्ध आदि के अर्थ में) को सम्बोधित करके कह रहे हैं कि मुझे एक ऐसी जगह पर ले चलो जहाँ सांसारिक झगड़े न हों। जहाँ मैं प्रकृति के मूल रूप को अपनी आँखों से देख सकूँ, अपने कानों से सुन सकूँ और अपने हृदय की गहराइयों से महसूस कर सकूँ। इस कविता में 'वहाँ' से तात्पर्य वैसी दुनिया से है, जहाँ मनुष्य के संघर्षमय माहौल को स्थगित किया जा सके।

एक तरह से प्रसाद का यह कल्पित लोक है, जहाँ प्रकृति अपने अनुभूतिमय रूप में उपस्थित है और मनुष्य का हस्तक्षेप बिल्कुल नहीं है।

व्याख्या

जयशंकर प्रसाद इस कविता में एक ऐसे लोक की कल्पना करते हैं, जहाँ धरती का कोलाहल बिल्कुल न हो और प्रकृति अपने मूल रूप में दिखाई पड़ रही हो। प्रकृति का यह रूप हमारी अनुभूतियों को विस्तार देता हो, ताकि हम अपने स्वाभाविक रूप के नजदीक पहुँच सकें। मगर, यह जगह होगी कहाँ? प्रसाद ने वह जगह तो ठीक-ठीक नहीं बतायी है, मगर उस जगह के लक्षणों के बारे में बताया है और नाविक से आत्मीयतापूर्वक कहा कि उस जगह पर ले चलो। यह नाविक कौन है? प्रसाद उससे अपनाव प्रकट करते हुए कहते हैं- 'मेरे नाविक।'। छायावाद की प्रवृत्तियों को ध्यान में रखते हुए प्रायः यही निष्कर्ष निकाला गया है कि यह नाविक हम सब

कठिन शब्द

1.नाविक - नियति भाग्य तकदीर 2. सागर लहरी - समुद्र की लहरें उन्मुक्त और कोमल भावनाएँ। 3.गहरी - गम्भीर 4. अवनी - धरती, संसार 5. ढीले - सहज और निश्चेष्ट हो जाना 6.नील नयन- नीला आकाश 7. पाँति - पंक्ति, लड़ी 8. विश्व चित्रपट - यह सृष्टि चित्रों के संग्रह (अल्बम) की तरह है 9. विभुता - प्रभुता 10 विराटता, व्यापकता 11. विभु-सी- प्रभु के समान, विराट के समान 13. वेला - तट, किनारा, अंतिम छोर।

की 'नियति' है या 'प्रारब्ध' है। इसे हम 'भाग्य' या 'तकदीर' भी कह सकते हैं। प्रसाद 'नियतिवादी' भी कहे गए हैं। सारांश यह कि प्रसाद चाहते हैं कि काश मैं संयोग से (नियति के सहारे) ऐसी जगह पहुँच पाता, जहाँ धरती के संघर्ष नहीं होते और प्रकृति अपने मूल रूप में अनुभूतिमयी बनकर हमारे सामने होती।

प्रसाद कहते हैं कि हे मेरे नाविक। मुझे भुलावा देकर धीरे-धीरे 'वहाँ' ले चलो। मुझसे बताने की जरूरत नहीं है कि उस जगह पर तुम किस रास्ते से ले कर चलोगे। मुझे अनजान ही रहने दो। मैं इस उलझन/बहस में भी पड़ना नहीं चाहता कि कौन-सा रास्ता मुझे

'वहाँ' पहुँचा पाएगा। तुम सहज भाव से धीमे-धीमे ले चलते हुए उस जगह तक पहुँचा दो। वह मेरी अभीष्ट जगह है। मैं वहाँ पहुँचकर उन तमाम आवरणों को फेंक देना चाहता हूँ, जो धरती के संघर्षों के कारण हमारे ऊपर चढ़ जाते हैं।

अगली पंक्तियों में वे उस जगह के लक्षणों के बारे में बताते हैं। उस जगह की पहचान बताते हुए वे कहते हैं कि मुझे उस निर्जन जगह पर ले चलो, जहाँ सागर की लहरी, अंबर के कानों में निश्छल प्रेम की गहरी कथा कहती हो। और वहाँ पर धरती का कोलाहल बिल्कुल न हो। धरती के संघर्षों से दूर अपने प्राकृतिक स्वभाव में प्रेम को देखने की अभिलाषा कवि ने प्रकट की है।

मैं उस जगह पर ढलती हुई शाम के रूप को देखना चाहता हूँ, और महसूस करना चाहता हूँ कि शाम में, कैसे जीवन अपनी कोमल काया को विश्राम के लिए ढीला छोड़ देता है। जो जीवन दिन भर सक्रिय रहता है, वह शाम में विश्राम के लिए अपने शरीर को निष्क्रिय कर देता है। मैं इस दृश्य को देखना चाहता हूँ। मैं उस गहराती हुई शाम में तारों की पंक्तियों को निकलते हुए देखना चाहता हूँ और महसूस करना चाहता हूँ कि ये तारे 'जीवन छाया' के ढुलकते आँसुओं की तरह हैं। प्रकृति के ये दृश्य जीवन की छाया (प्रतिरूप/प्रतीक) के रूप में मेरे सामने घटित होते दिखाई पड़ें, ताकि मैं जान सकूँ कि मनुष्य का जीवन अपने प्राकृतिक रूप में किस तरह का है। यह भी समझ सकूँ की सांसारिक संघर्षों ने जीवन को कितना अस्वाभाविक बना दिया है।

यह सृष्टि विराट और गम्भीर है। वह अपनी मधुरता और गम्भीरता की छाया में अनेक चित्रों को समेटे हुए है। ये चित्र स्थिर चित्रों की तरह नहीं हैं, बल्कि गतिशील हैं। ये चित्र वास्तविक होते हुए भी चंचल माया की तरह अनेक रूप धारण करने की क्षमता रखते हैं। मैं सृष्टि के चित्रों के बीच प्रकृति की विराटता के प्रत्यक्ष रूप को देखना चाहता हूँ। ठीक वैसे ही, जैसे विराट को सीधे देखकर उसकी विराटता को महसूस करना। विभु की विभुता को अप्रत्यक्ष रूप से महसूस करने के कई उपाय हैं। हम लघु रूपों में भी विराटता को महसूस कर सकते हैं। मगर यह सब अप्रत्यक्ष ही रहता है। मैं प्रत्यक्ष रूप से विराट को देखकर उसकी विराटता को जानना चाहता हूँ। यह विराट सुख से बना है या दुःख से? कवि का ख्याल है कि यह विराट सुख-दुःख के सापेक्ष नहीं होता है। वह सत्य की तरह होता है, वह आनन्द की तरह होता है, वह रस की तरह होता है। रामचंद्र गुणचंद्र ने रस के बारे में लिखा है, 'सुखदुखात्मको रसः'। अर्थात् रस सुखात्मक भी होता है और दुखात्मक भी। रस मूलतः आनन्द है, सुख-दुःख की परिधि को तोड़कर मिलनेवाली तन्मयता और तल्लीनता। कवि उस विराट को देखना चाहता है जिसमें सुख भी है और दुःख भी, मगर उसकी कसौटी है - सत्य।

हे नाविक। मुझे उस जगह पर पहुँचकर एक और दृश्य देखना और महसूस करना है। मैं रात के उस रूप को देखना चाहता हूँ जिसमें श्रम से थकी सृष्टि विश्राम कर रही हो। श्रम-विश्राम के मिलन-बिंदु की तरह बनी हुई उस रात को देखना चाहता हूँ। रात मानो ढल रही हो और क्षितिज के तट पर प्रभात अँगड़ाइयाँ ले रहा हो। रात के विश्राम के बाद पुनः सृष्टि के विभिन्न घटक सृजन के कामों में लगते हुए ऐसे दिखाई पड़ें मानो सुबह होते ही सृजन का मेला-सा लग गया हो। मैं सुबह के उस दृश्य को देखना चाहता हूँ कि कैसे उषा की आँखों से बरसती अखंड ज्योति, अमरण जागरण का, संदेश लेकर आती है। हे नाविक। मुझे तुम ऐसी ही जगह पर ले चलो।

काव्य सौष्ठव/विशेष

- यह पलायन का गीत नहीं है।
- इसमें जीवन की आसक्ति से मुक्त होकर जीवन को समझने की कामना है।
- सांसारिक संघर्षों ने जीवन को वेदनामय बना दिया है।

- कवि का विचार है कि यह जीवन अपने मूल रूप में आनन्दमूलक है।
- इसमें कवि की आकांक्षाओं का संसार व्यक्त हुआ है।
- इस कविता की प्रत्येक पंक्ति में 16-16 मात्राएँ हैं। पहली पंक्ति को छोड़कर प्रत्येक पंक्ति के अंत में दीर्घ की मात्रा है।

बोध प्रश्न-2

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर संक्षेप में दें।

1. 'ले चल वहाँ भुलावा देकर' कविता में 'नाविक' से क्या अभिप्राय है?

   .....

   .....

   .....

   .....

2. 'ले चल वहाँ भुलावा देकर' कविता पर 'पलायनवाद' का आरोप किस हद तक सही है?

   .....

   .....

   .....

   .....

3. नीचे प्रश्न के साथ कुछ विकल्प दिए जा रहे है। उत्तर के लिए सही विकल्प को चन्हित कीजिए।

   i. 'ले चल वहाँ भुलावा देकर' शीर्षक कविता पर किस तरह की कविता होने के आरोप लगे हैं ?

      क) अध्यात्मवादी ख) रहस्यवादी ग) पलायनवादी घ) हालावादी

   ii. 'ले चल वहाँ भुलावा देकर' कविता में 'नाविक' शब्द से क्या आशय है ?

      क) नाव चलानेवाला ख) नियति ग) प्रकृति घ) प्रेमिका

   iii. सागर की लहरी, अंबर के कानों में, क्या कह रही हो ?

      क) रहस्यात्मक बातें ख) उलाहना भरी बातें
      ग) आध्यात्मिक कथा घ) निश्छल प्रेम-कथा

   iv. 'ले चल वहाँ भुलावा देकर' कविता का प्रथम प्रकाशन कब हुआ था?

      क) 1932 ख) 1935 ग) 1933 घ) 1934

तीन

हिमाद्रि तुंग शृंग से प्रबुद्ध शुद्ध भारती

हिमाद्रि तुंग शृंग से प्रबुद्ध शुद्ध भारती
स्वयंप्रभा समुज्ज्वला स्वतंत्रता पुकारती

अमर्त्य वीरपुत्र हो, दृढ़-प्रतिज्ञ सोच लो,
प्रशस्त पुण्य पन्थ है - बढ़े चलो, बढ़े चलो।
असंख्य कीर्ति-रश्मियाँ, विकीर्ण दिव्य दाह-सी
सपूत मातृभूमि के रुको न शूर साहसी।
अराति सैन्य सिन्धु में - सुबाड़वाग्नि से जलो।
प्रवीर हो जयी बनो- बढ़े चलो, बढ़े चलो।।

सन्दर्भ और प्रसंग

यह कविता 'चन्द्रगुप्त' (1931) नाटक के चतुर्थ अंक के षष्ठ दृश्य से ली गयी है। तक्षशिला के राजकुमार आम्भीक के द्वारा विदेशी आक्रान्ता सिकंदर को समर्थन देने के कारण जनता में असंतोष उत्पन्न हुआ। आम्भीक की बहन अलका जनता को नेतृत्व देते हुए यह गीत गाती है। वह चाहती है कि तक्षशिला के लोग एकजुट होकर विदेशी आक्रमणकारियों का मुकाबला करे। इसके लिए वह अपने भाई की अवसरवादी राजनीति का विरोध करती है और जनता से आह्वान करती है कि विदेशी आक्रमण का मुकाबला करके अपने गौरव को बढाएँ।

व्याख्या

अलका तक्षशिला के नागरिकों को सम्बोधित करते हुए कहती है कि हिमालय की ऊँची चोटियों से मानो स्वतंत्रता की पुकार आ रही है। ऐसा लगता है मानो अपनी ही प्रभा से उज्ज्वल विद्या की अधिष्ठात्री देवी सरस्वती स्वतंत्रता की पुकार लगा रही हैं। अविद्या को दूर कर विद्या की चेतना फैलानेवाली सरस्वती प्रबुद्धता और शुद्धता का प्रतीक हैं। उनके आह्वान को सुनो। वे तुमसे कुछ कह रही हैं।

कठिन शब्द

1. हिमाद्रि - हिमालय 2. हिम़अद्रि (पर्वत) 3. तुंग - ऊँचीं 4. शृंग - चोटी 5. प्रबुद्ध - बोध और विद्या से युक्त 6. शुद्ध - निर्मल 7. भारती - विद्या की चेतना 8. अविद्या का नाश करनेवाली चेतना, देवी सरस्वती 9. स्वयंप्रभा - अपनी विद्या के आलोक से युक्त 10.समुज्ज्वला - उज्ज्वलता से परिपूर्ण 11. स्वतंत्रता पुकारती - स्वतंत्रता की पुकार लगा रही है वह सरस्वती 12.अमर्त्य - अमर 13. वीरपुत्र - बहादुर संतान हो तुम 14. -दृढ़-प्रतिज्ञा - जो अपने इरादे पर अडिग हो 15. प्रशस्त - विस्तृत और भविष्यगामी 16. पुण्य पन्थ - अच्छे कामों का रास्ता 17.कीर्ति-रश्मियाँ - यश की किरणें 18.विकीर्ण - फैली हुई 19. दिव्य दाह-सी - अलौकिक अग्नि के समान 20. अराति - शत्रु 21. सैन्य सिन्धु - सेना-रूपी समुद्र 22. सुबाड़वाग्नि - समुद्र में जलनेवाली कल्पित आग 13. प्रवीर - अत्यंत वीर

विद्या की चेतना का प्रतीक वह भारती तुमसे कह रही हैं कि तुम अमर वीरों की संतान हो और स्वयं भी अमरत्व के गुणों से विभूषित हो। देश की रक्षा के लिए दृढ़तापूर्वक प्रतिज्ञा लेने के बारे में सोच लो यह पुण्य का रास्ता है और पुण्य का रास्ता हमेशा विस्तृत होता है। इसलिए इस रास्ते पर तुम बढ़ते चलो।

तुम्हारे पूर्वजों के अनंत यश हैं। उनके यश असंख्य किरणों की तरह फैले हैं। ऐसा लगता है मानो अलौकिक अग्नि चारों तरफ फैली हुई है। तुम अपनी मातृभूमि की सुयोग्य संतान हो। तुम वीर और साहसी हो, इसलिए अपने रास्ते पर बिना रुके चलते रहो। यद्यपि शत्रुओं की सेना समुद्र की तरह विराट है, मगर तुम समुद्री आग की तरह जल उठो और शत्रु-सेना का नाश करो। तुम श्रेष्ठ वीर हो, विजयी बनो, अपने रास्ते पर बढ़ते चलो।

अलका चाहती है कि उसकी तक्षशिला के नागरिक अपने राजा की गलत राजनीति में साथ न दें। वे तक्षशिला पर लगनेवाले कलंक को धो डालें। वे इतिहास में देशभक्त के रूप में दर्ज हों, भले उन्हें राजद्रोह करना पड़े।

काव्य सौष्ठव/विशेष

- यह प्रयाण या आह्वान गीत है।
- राष्ट्रीय स्वाधीनता आन्दोलन के दौर में लिखी गयी यह कविता राजनीतिक अर्थ भी रखती है।
- देश-प्रेम सर्वोपरि है, भले ही उसके लिए राजद्रोह करना पड़े।
- इसकी प्रत्येक पंक्ति में 24-24 मात्राएँ हैं। ह्रस्व-दीर्घ-ह्रस्व-दीर्घ के क्रम में सुगठित इन पंक्तियों में 'अनंगशेखर' छन्द है। प्रत्येक पंक्ति के अंत में दीर्घ की मात्रा है। इसी छन्द में रावण द्वारा लिखित कहा जानेवाला 'शिवताण्डवस्तोत्र' है - 'जटाटवीगलज्जल प्रवाहपावितास्थले—जिसे 'पंच चामर' छंद भी कहते हैं।
- इसकी धुन परेड की धुन की तरह है।

बोध प्रश्न-3

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर संक्षेप में दें।

1. 'हिमाद्रि तुंग श्रृंग से....' किस प्रकार का गीत है?

   .....

   .....

   .....

   .....

2. 'हिमाद्रि तुंग श्रृंग से....' कविता के छन्द-विधान के बारे में बताएँ?

   .....

   .....

   .....

   .....

3. नीचे प्रश्न के साथ कुछ विकल्प दिए जा रहे है। उत्तर के लिए सही विकल्प को चिन्हित कीजिए।

   i 'हिमाद्रि तुंग श्रृंग से.....' शीर्षक कविता किस पुस्तक में शामिल है?

   क) झरना ख) लहर ग) स्कन्दगुप्त घ) चन्द्रगुप्त

   ii 'अराति' का क्या अर्थ है?

   क) आर्त्तवाणी ख) विशाल ग) शत्रु घ) शूरवीर

   iii. 'चन्द्रगुप्त' नाटक का प्रकाशन-वर्ष बताएँ?

   क) 1931 ख) 1925 ग) 1932 घ) 1936

   iv. 'हिमाद्रि तुंग श्रृंग से...' गीत गानेवाले पात्र का नाम बताएँ ?

   क) मालविका ख) सुवासिनी ग) कॉर्नेलिया घ) अलका

कर गयी प्लावित तन-मन सारा (झरना)

मधुर है स्रोत मधुर है लहरी
न है उत्पात, छटा है छहरी
मनोहर झरना
कठिन गिरि कहाँ विदारित करना
बात कुछ छिपी हुई है गहरी
मधुर है स्रोत मधुर है लहरी
कल्पनातीत काल की घटना
हृदय को लगी अचानक रटना
देखकर झरना
प्रथम वर्षा से इसका भरना
स्मरण ही रहा शैल का काटना
कल्पनातीत काल की घटना
कर गई प्लावित तन-मन सारा
एक दिन तव अपांग की धारा
हृदय से झरना
बह चला, जैसे -गजल ढरना
प्रणय बन्या ने किया पसारा
कर गई प्लावित तन-मन सारा
प्रेम की पवित्र परछाईं में
लालसा हरित विटप आईं में
बह चला झरना
तापमय जीवन शीतल करना
सत्य यह तेरी सुघराई में
प्रेम की पवित्र परछाईं में

सन्दर्भ और प्रसंग

'कर गई प्लावित तन-मन सारा' कविता जयशंकर प्रसाद के काव्य-संग्रह 'झरना' (1918) में संगृहीत है।

इस कविता को 'झरना' शीर्षक से संगृहीत किया गया है। इसके लेखन और प्रथम प्रकाशन-वर्ष की जानकारी 'जयशंकर प्रसाद ग्रन्थावली' में नहीं दी गयी है। 'झरना' में संगृहीत कविताएँ, जयशंकर प्रसाद की प्रारम्भिक कविताएँ (खड़ी बोली हिंदी में) हैं। इस कविता में 'झरना' को विषय बनाया गया है। उसकी मधुरता, स्वच्छंदता और कल्पना को जन्म देने की क्षमता के बारे में बात करता हुआ कवि कहता है कि तुममें मन को शीतलता प्रदान करने की क्षमता है।

व्याख्या

जयशंकर प्रसाद ने प्रस्तुत कविता में 'झरना' को विषय बनाया है। वे कहते हैं कि झरना एक मधुर जलस्रोत की तरह है। इसमें प्रवाहित होनेवाली जल की तरंगें मधुर मालूम पड़ती हैं। इसके प्रवाह में किसी तरह का उत्पात नहीं है। इसकी छहराती जल-बूँदों में सौन्दर्य की अद्‌भुत छटाएँ हैं। झरना मनोहर मालूम पड़ता है।

अपनी कोमलता के बावजूद, कठोर पर्वत को चीरकर, यह झरना निकल पड़ता है। इसमें जरूर कोई गहरी-गंभीर बात छिपी हुई है, क्योंकि कहाँ कोमल-मधुर झरना और कहाँ कठोर पर्वत। कठोर को भेदता हुआ कोमल। पर्वत को चीरनेवाली घटना कब घटित हुई होगी? यह घटना सम्भवतः उस कालखंड में हुई होगी, जो हमारी कल्पना की सीमा से

परे है। झरने को देखकर हमारे मन में मानो यह बात बार-बार याद आने लगी कि यह सब कब हुआ होगा? जब कोमल ने कठोर को चीर दिया होगा।

यह झरना पहली बार कब बारिश से भरा-पूरा हुआ होगा? पता नहीं। फिर इसने चट्टानों को धीरे-धीरे काट डाला होगा। अब तो यह सब झरने की स्मृति-मात्र में रह गया होगा। यह घटना कल्पना की सीमा से परे हो गए किसी कल-क्रम में घटित हुई होगी।

इसके बाद कवि झरना के बहाने अपनी प्रिया को याद करने लगता है। झरने के रूप-विन्यास, ध्वनि, गति आदि के प्रभाव में आकर वह अपने व्यक्तिगत प्रेम की स्मृति की ओर उन्मुख हो जाता है। वह कहता है कि प्रेम की पहली बारिश से मेरे हृदय-रूपी झरने का भर जाना, अनेक तरह की कठोर कठिनाइयों का प्रेम के प्रवाह में कट जाना आदि - आज मेरी स्मृति में है। तुम्हारी आँखों के कोरकों में छलक आई आँसू की धारा मेरे तन-मन को सराबोर कर गयी थी। मेरा हृदय मानो झरने की तरह फूट-फूटकर बह चला था।

मैं अपने आँसुओं के प्रवाह के साथ बह चला। प्रेम की बाढ़ ने मानो मेरे तन-मन को सराबोर कर दिया था। मैं प्रेम की पवित्र छाया में था और मेरे हृदय का झरना मानो प्रेम की लालसा के हरित वन में प्रवाहित हो चला।

झरना और झरने के कारण आई प्रेम की स्मृति ने तापमय जीवन को शीतलता दी। झरने की सुंदर और सुगढ़ छवि में एक तरह के सत्य का दर्शन हुआ और उसमें प्रेम की पवित्र परछाईं भी दिखाई पड़ी।

काव्य सौष्ठव/विशेष

यह कविता छायावाद की स्वच्छंदता को 'झरना' के प्रतीक से व्यक्त करती है। अंग्रेजी और बांगला की रोमानी कविताओं में भी 'झरना' के प्रतीक को इसी अर्थ में अपनाया गया है।

मनुष्य के भाव को प्रकृति में देखना और प्रकृति के विविध रूपों में मनुष्य के भाव को देखना - यह क्रम छायावादी कविता की एक पहचान है। इस कविता में प्रकृति को देखते हुए मानवीय भावों तक पहुँचा गया है और पुनः प्रकृति की ओर लौटते हुए मानवीय भावों को व्यक्त किया गया है।

कठिन शब्द

प्लावित - सराबोर कर देना, पूरी तरह नहला देना, छहरी - छिटक-छिटक कर शोभा का उत्पन्न होना, गिरि - पर्वत, विदारित - चीरना, पत्थरों को चीरते हुए झरने का निकलना, कल्पनातीत - कल्पना की सीमा में जो न समा सके, रटना - रट लग जाना, किसी बात की आवृत्ति मन ही मन होने लगना, प्रथम वर्षा - पहली बारिश में, प्रेम की पहली अनुभूति में, शैल का कटना - चट्टानों को काटते हुए झरनों का निकलना, अपांग - आँखों का किनारा या कोर, -गजल - आँसू, वन्या - बाढ़, जल प्लावन, सुघराई - सुंदर और सुडौल।

इस कविता में 17 और 9 मात्राओं की पंक्तियाँ हैं। टेक की तरह आई हुई चार पंक्तियों में 9-9 मात्राएँ हैं और शेष 20 पंक्तियों में 17-17 मात्राएँ हैं। प्रत्येक पंक्ति के अंत में दीर्घ की मात्रा है।

बोध प्रश्न-4

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर संक्षेप में दें।

1. 'झरना' की प्रतीकात्मकता को स्पष्ट करें?

.....

.....

.....

2. नीचे प्रश्न के साथ कुछ विकल्प दिए जा रहे है। उत्तर के लिए सही विकल्प को चिन्हित कीजिए।

i. 'झरना' का प्रकाशन कब हुआ था?

क) 1936 ख) 1925 ग) 1935 घ) 1918

ii. 'अपांग' का क्या अर्थ है?

क) विकलांग ख) सौन्दर्य ग) आँखों का किनारा घ) नेत्र गोलक iii. प्रणय वन्या' में कौन-सा अलंकार है ?

क) रूपक ख) उपमा ग) उत्प्रेक्षा घ) असंगति

iv. 'झरना' किस भाव का प्रतीक है ?

क) स्वच्छंदता ख) धार्मिकता ग) आनंद घ) पलायन

14.3 सारांश

इस इकाई में आपने छायावाद के प्रतिनिधि कवि जयशंकर प्रसाद की चार महत्वपूर्ण कविताओं का अध्ययन किया और उनके पाठ-विश्लेषण का ज्ञान प्राप्त किया। इन चारों कविताओं के अध्ययन का सार इस प्रकार प्रस्तुत किया जा सकता है-

- 'बीती विभावरी जाग री' सोयी हुई युवती को उसकी सखी खूब सबेरे जगा रही है और प्रकृति के जागरण का हवाला दे रही है। अंत में उसके व्यक्तिगत वियोग-भाव के प्रति सहानुभूति प्रकट कर रही है। यह कविता एक जागरण गीत है।
- 'ले चल वहां भुलवा देकर' यह कविता जीवन के प्राकृतिक रूप को समझने का आग्रह करती है। सांसारिक संघर्ष, आकर्षण, भ्रम और सम्बन्ध के कारण हम जीवन को छद्म दृष्टियों से देखने को बाध्य हो जाते हैं। कवि ने एक ऐसी जगह की कल्पना की है जहाँ पहुँचकर जीवन को उसकी प्रकृति के साथ निर्भ्रांत होकर देखा जा सके।
- 'हिमाद्रि तुंग श्रृंग से प्रबुद्ध शुद्ध भारती' से विदेशी आक्रान्ताओं के खिलाफ जनता को प्रेरित करनेवाला प्रयाणगीत है। अलका तक्षशिला के नागरिकों को देशभक्ति के लिए प्रेरित कर रही है और राजद्रोह को उचित बता रही है। इस गीत में आत्मगौरव भरने के भाव की प्रमुखता है।
- 'कर गयी प्लावित तन-मन सारा' कविता में झरना मधुर है, उसकी लहरें कोमल हैं। उसकी छिटकती बूँदों में सौन्दर्य का विलास है। मगर, उसने कठोर पर्वत को चीरकर अपना यह स्वरूप धारण किया है। उसे देखते हुए कवि अपने हृदय में फूटती प्रेम की धारा की अनुभूति करता है।

14.4 उपयोगी पुस्तकें

1. जयशंकर प्रसाद - नंददुलारे वाजपेयी, लोकभारती प्रकाशन, दरियागंज, नयी दिल्ली
2. प्रसाद का काव्य - प्रेमशंकर, राधाकृष्ण प्रकाशन, नयी दिल्ली
3. जयशंकर प्रसाद ग्रन्थावली - स-- ओमप्रकाश सिंह, प्रकाशन संस्थान, नयी दिल्ली
4- प्रसाद काव्य-कोश -कमलेश वर्मा, सुचिता वर्मा, द मर्जिनलाइज्ड पब्लिकेशन, इग्नू रोड, दिल्ली

5. छायावादी काव्य-कोश - कमलेश वर्मा, सुचिता वर्मा, द मर्जिनलाइज्ड पब्लिकेशन, इग्नू रोड, दिल्ली

14.5 बोध प्रश्नों / अभ्यासों के उत्तर

बोध प्रश्न 1

1. नायिका को जगाती हुई सखी कह रही है कि ऊषा-रूपी स्त्री, तारे-रूपी घड़ों को, आकाश-रूपी पनघट में डुबो रही है। मतलब यह कि सुबह हो रही है और सितारे डूब रहे हैं। आकाश मानो पनघट है, सुबह मानो स्त्री है। वह स्त्री घड़े लेकर पनघट पर पानी भरने गयी है। वह एक-एक घड़े को पानी में डुबोती जा रही है। इस तरह वह बता रही है कि सुबह हो चुकी है, इसलिए हे सखि, तुम जाग जाओ!

2. 'बीती विभावरी जाग री' शीर्षक कविता में सोयी हुई नायिका को उसकी सखी जगा रही है। वह बता रही है कि प्रकृति के विभिन्न उपादानों में जागरण के संकेत दिखाई पड़ रहे हैं। तारे डूब रहे हैं और सुबह सक्रिय हो गयी है। पक्षी बोल रहे हैं। किसलय आँचल की तरह डोल रहे हैं। एक छोटी-सी लतिका में आज कली निकल आयी है। इस तरह प्रकृति के रोम-रोम में जागृति के संदेश बिखरे पड़े हैं और हे सखि! तुम अब तक सोयी हुई हो! तुम्हें जाग जाना चाहिए। यह कविता 1935 में लिखी गयी थी। स्वतंत्रता आन्दोलन के उस दौर में प्रकृति-परक और रूपकनुमा अनेक जागरण गीत लिखे गए थे। छायावाद के वैशिष्ट्य के अनुसार इनकी शैली प्रायः लाक्षणिक हुआ करती थी। इसी तरह की लाक्षणिक शैली में लिखा गया यह जागरण गीत भी है।

3. i) ख

   ii) क

   iii) ख

   iv) घ

बोध प्रश्न 2

1. 'ले चल वहाँ भुलावा देकर' कविता में 'नाविक' शब्द से अभिप्राय है नियति का प्रसाद अपनी नियति से मानो कह रहे हैं कि मुझे तुम ऐसी जगह ले चलो जहाँ सांसारिक संघर्षों और आवरणों को किनारे कर मनुष्य के जीवन को समझने का अवसर मिले. इस संसार में जितने रास्ते दिखाई पड़ते हैं, वे सब के सब अन्य-अन्य प्रसंगों से आक्रांत हैं। मैं प्रकृति के निरावृत्त रूप में जीवन के रूप को देखना चाहता हूँ। इस काम में मेरी मदद शायद मेरी नियति ही कर सकती है। अपनी नियति को ही 'मेरे नाविक' का रूपक इस कविता में दिया गया है।

2. जयशंकर प्रसाद शैव दर्शन के आनंदवाद में विश्वास रखनेवाले कवि हैं। उन्होंने 'कामायनी' के अंत में भी आनंदवादी समाधान दिखाया है। इस कविता में वे एक ऐसी जगह पर जाने की आकांक्षा प्रकट करते हैं, जहाँ सांसारिक संघर्षों और आवरणों से मुक्त होकर प्रकृति और जीवन के निरावृत्त रूप को देखा जा सके! वे पहले परिच्छेद में कहते हैं कि मुझे उस निर्जन स्थान पर ले चलो जहाँ सागर की लहरें, अंबर के कानों में, निश्छल भाव से अपनी प्रेम-कथा कह रही हों! वहाँ किसी भी प्रकार का सांसारिक कोलाहल न हो! पूरी कविता में इसी भाव को पल्लवित किया गया है। अपने प्रारम्भिक रूप में यह कविता संसार से पलायन करती हुई भले मालूम पड़ती

है, मगर अंततः यह जीवन के मूल प्रश्नों पर ही विचार करती है। विकसित होती जाती सभ्यताओं में इतने सारे आवरण बनते जा रहे हैं कि जीवन के मूल को पहचानने में कठिनाई होने लगती है। यह कविता इसी मूल रूप के महत्त्व की याद दिला रही है। यह कविता छायावाद के यूटोपियाई संसार की तरह भी है। अतः इस कविता पर 'पलायनवाद' का आरोप लगाना पूरी तरह सही नहीं है।

3. i) ग

   ii) ख

   iii) घ

   iv) क

बोध प्रश्न 3

1. 'हिमाद्रि तुंग शृंग से' एक प्रयाण गीत है। तक्षशिला के राजकुमार आम्भीक ने विदेशी आक्रमणकारी सिकंदर से समझौता करके तात्कालिक लाभ उठाना चाहा। आम्भीक की बहन अलका ने उसके इस कदम का विरोध किया और तक्षशिला के नागरिकों से आह्वान किया कि वे इस निर्णय के खिलाफ बगावत करें। तक्षशिला के नागरिकों ने अलका का साथ दिया। अलका उद्‌बोधन के बाद यह गीत गाती है जिसमें आह्वान किया गया है कि तुम शूरवीर होय यशस्वी पूर्वजों की संतान हो! आज हिमालय की ऊँची चोटियों से भी यही पुकार आ रही है कि स्वतंत्रता के लिए संघर्ष करो!

2. 'हिमाद्रि तुंग शृंग से' कविता में अनंगशेखर या 'पंच चामर' छन्द है। इस छन्द की विशेषता होती है कि इसमें ह्रस्व-दीर्घ का क्रम छंद के अंत तक चलता रहता है। इस कविता की प्रत्येक पंक्ति में 24-24 मात्राएँ हैं और अंत में दीर्घ की मात्रा है। इसी छन्द में रावण द्वारा लिखित कहा जानेवाला 'शिवताण्डवस्तोत्र' है - 'जटाटवीगलज्जल प्रवाहपावितास्थले'। ह्रस्व-दीर्घ मात्राओं का क्रमशः उतार-चढ़ाव इस छन्द को नाद सौन्दर्य की अनुगूँज से भर देता है। इसकी धुन परेड की धुन की तरह है, जिससे लगता है कि सैनिकों के कदमताल के साथ यह छन्द गतिमान हो रहा हो!

3. i) घ

   ii) ग

   iii) क

   iv) घ

बोध प्रश्न 4

1. प्रस्तुत कविता में 'झरना' स्वच्छंदता का प्रतीक है। वह मधुर, सुंदर और कोमल है। मगर उसने कठोर पर्वत को चीरकर अपना यह स्वरूप प्राप्त किया है। उसे देखकर मन में स्वच्छंदता के भाव उत्पन्न होते हैं। यह प्रेरणा मिलती है कि पराधीनता चाहे कितनी भी कठोर हो, अपनी कोमलता के बावजूद उसका निराकरण किया जा सकता है।

2. i) घ

   ii) ग

   iii) क

   iv) क

इकाई 15 काव्य वाचन एवं विश्लेषण : सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला'

इकाई की रूपरेखा

15.0 उद्देश्य

15.1 प्रस्तावना

15.2 चयनित कविताओं का पाठ और विश्लेशण

15.3 सारांश

15.4 उपयोगी पुस्तकें

15.5 बोध प्रश्नों/अभ्यासों के उत्तर

15.0 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने का उद्देश्य है :

- सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला' की कविताओं की विस्तृत व्याख्या करना।
- निराला की कविताओं की व्याख्या की दिशाओं को जानना।
- इन कविताओं के माध्यम से छायावाद की विशिष्टताओं को जानना।
- निराला की काव्य-भाषा को समझने का प्रयास।
- निराला की शब्द-योजना और शब्दावली को जानना।

15.1 प्रस्तावना

सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला' का जन्म 1898 या 1899 में हुआ था। उनका परिवार उत्तर प्रदेश के जिला उन्नाव में गढ़ाकोला का रहनेवाला था। मगर उनका जन्म बंगाल के मेदिनीपुर जिले में हुआ था। उनकी औपचारिक शिक्षा हाई स्कूल तक हुई थी। अपनी जीविका के लिए निराला ने महिषादल रजवाड़े (बंगाल) के अंतर्गत छोटी-सी नौकरी की थी। उसके बाद उन्होंने इस तरह की नौकरी छोड़ दी और लेखन-सम्पादन को अपनी जीविका का साधन बनाने का प्रयास किया। वे जीवन भर लेखन-सम्पादन करते रहे और आर्थिक मामले में अभाव झेलते रहे। उन्होंने अर्थोपार्जन को ध्यान में रखकर बड़े पैमाने पर अनुवाद का काम भी किया। 'समन्वय', 'मतवाला', 'सुधा' आदि पत्रिकाओं के लिए उन्होंने काम किया। निराला इन पत्रिकाओं के लिए जी-जान से लगे रहे, मगर इनके सम्पादक होने का गौरव उन्हें प्राप्त नहीं हुआ। निराला का व्यक्तिगत-पारिवारिक जीवन अनेक संकटों से गुजरता रहा। उनकी पत्नी मनोहरा देवी की मृत्यु उस समय हो गयी थी जब निराला मुश्किल से 22 साल के थे और उनकी बेटी सरोज की उम्र सवा साल की थी। सरोज भी 18 साल की होकर मृत्यु को प्राप्त हो गयी थी। व्यक्तिगत क्षति, अत्यधिक संवेदनशील मानसिक बनावट और आर्थिक अभाव से बना हुआ निराला का व्यक्तित्व हिंदी के दूसरे कवियों से कई अर्थों में भिन्न था। लगभग 62-63 साल की उम्र में 15 अक्टूबर, 1961 ई- को बीमारी की हालत में निराला की मृत्यु हो गयी थी। उनकी रचनाओं की सूची इस प्रकार है :

काव्य-कृतियाँ

अनामिका (1923 / 1939), परिमल (1929), गीतिका (1936), तुलसीदास (1934 / 1939), कुकुरमुत्ता (1943 / 1948), अणिमा (1943), बेला (1946), नये पत्ते (1946), अर्चना (1950), आराधना (1953), गीत-गुंज (1954), सान्ध्य काकली (मरणोपरांत 1969 में प्रकाशित)

कहानी-संग्रह

लिली (1934), सखी / चतुरी चमार (1935 / 1945), सुकुल की बीवी (1941), देवी (कुल 10 में से 01 कहानी नयी - 1948)

उपन्यास

अप्सरा (1931), अलका (1933), प्रभावती (1936), निरुपमा (1936), कुल्ली भाट (1939), बिल्लेसुर बकरिहा (1942), चोटी की पकड़(1946), काले कारनामे (1950), चमेली (अपूर्ण), इन्दुलेखा (अपूर्ण)

निबन्ध

प्रबन्ध-प्रतिमा (1940), प्रबन्ध-पद्म (1934), रवीन्द्र-कविता-कानन (1929), रस-अलंकार (1926), चाबुक (1941 या 1942), चयन (1957), संग्रह (1963)

निराला छायावाद के चार श्रेष्ठ कवियों में से एक हैं। उनके लेखन का एक बड़ा हिस्सा छायावादी दौर (1918-36) का है। मगर उन्होंने छायावाद के बाद के अपने 25 वर्षों में विपुल साहित्य की रचना की। निराला ने अपने लेखन काल में छायावाद, प्रगतिवाद, प्रयोगवाद और कुछ हद तक नयी कविता के दौर को न केवल देखा था, बल्कि अपनी रचनाओं के द्वारा प्रभावित किया था। मौलिकता निराला की पहचान थी। इसलिए वे अपने दौर की विभिन्न काव्य-प्रवृत्तियों को जान-समझ कर अपनी रचनाओं में अपना भी रहे थे और उन्हें अतिक्रमित भी कर रहे थे। उन्होंने प्रत्येक दौर में नये प्रयोगों को महत्त्व दिया। वे निरंतर नवोन्मेष को पसंद करनेवाले रचनाकार थे।

निराला ने भाव, भाषा और छंद की दृष्टि से कई नए प्रयोग किए। मुक्त छंद के लिए निराला के द्वारा किया गया संघर्ष बार-बार याद किया जाता है। 'राम की शक्ति-पूजा' और 'सरोज-स्मृति' जैसी क्लैसिक कविता लिखकर निराला ने 'लम्बी कविता' को एक काव्य-विधा का दर्जा दिलाया। 'तुलसीदास' जैसी संघनित और सामासिक भाषा में रची पुस्तक सुबोध तो नहीं है, मगर इस पुस्तक को हम निराला की श्रेष्ठ काव्य-प्रतिभा के प्रमाण के रूप में रेखांकित कर सकते हैं। छायावादी कवियों में सर्वाधिक गीत निराला ने रचे। उन्होंने प्रत्येक दौर में गीतों की रचना की। छायावादी ढंग के उपन्यासों के वे अकेले रचयिता है। उन्होंने यथार्थवादी उपन्यास भी रचे।

निराला की बौद्धिक क्षमता का प्रमाण उनके निबंधों में खुलकर प्रकट हुआ है। इन निबंधों में निराला की आलोचनात्मक क्षमता को देखकर कभी-कभी आश्चर्य होता है, क्योंकि वे मूलतः कवि थे और जरूरत पड़ने पर ही आलोचना लिखा करते थे। संस्कृत के कविकुलगुरु कालिदास, उर्दू के शायर गालिब, बांगला के कवि रवीन्द्रनाथ टैगोर, ब्रजभाषा के कवि बिहारी और अपने समय के कवि सुमित्रानंदन पन्त की जैसी आलोचना निराला ने अपने विभिन्न निबंधों में की है उसका स्तर उच्च कोटि का है। आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने निराला की प्रतिभा के इस पक्ष को पहचानते हुए लिखा था कि 'बहुवस्तुस्पर्शिनी प्रतिभा निरालाजी में है'।

15.2 चयनित कविताओं का पाठ और विश्लेषण

एक

संध्या सुन्दरी

दिवसावसान का समय
मेघमय आसमान से उतर रही है
वह सन्ध्या-सुन्दरी परी-सी
धीरे धीरे धीरे,
तिमिराञ्चल में चञ्चलता का नहीं कहीं आभास,
मधुर-मधुर हैं दोनों उसके अधर, -
किन्तु गम्भीर- नहीं है उनमें हास-विलास ।

हँसता है तो केवल तारा एक
गुँथा हुआ उन घुँघराले काले बालों से,
हृदय-राज्य की रानी का वह करता है अभिषेक ।

अलसता की-सी लता
किन्तु कोमलता की वह कली,
सखी नीरवता के कन्धे पर डाले बाँह,
छाँह-सी अम्बर-पथ से चली ।

नहीं बजती उसके हाथों में कोई वीणा,
नहीं होता कोई अनुराग-राग-आलाप,
नूपुरों में भी रुन-झुन रुन-झुन रुन-झुन नहीं,
सिर्फ एक अव्यक्त शब्द-सा "चुप चुप चुप"
है गूँज रहा सब कहीं, -
व्योममण्डल में-जगती-तल में-
सोती शान्त सरोवर पर उस अमर कमलिनी-दल में-
सौन्दर्य-गर्विता-सरिता के अति विस्तृत वक्षःस्थल में-
धीर वीर गम्भीर शिखर पर हिमगिरि-अटल-अचल में
उत्ताल-तरंगाघात, - प्रलय-घन-गर्जन-जलधि-प्रबल में
क्षिति में-जल में-नभ में-अनिल-अनल में-
सिर्फ एक अव्यक्त शब्द-सा "चुप चुप चुप"
है गूँज रहा सब कहीं, -
और क्या है? कुछ नहीं ।

मदिरा की वह नदी बहाती आती,
थके हुए जीवों को वह सस्नेह
प्याला वह एक पिलाती,
सुलाती उन्हें अंक पर अपने,
दिखलाती फिर विस्मृति के वह कितने मीठे सपने ।

अर्द्धरात्रि की निश्चलता में हो जाती वह लीन,
कवि का बढ़ जाता अनुराग,
विरहाकुल कमनीय कण्ठ से
आप निकल पड़ता तब एक विहाग ।

('मतवाला', साप्ताहिक, कलकत्ता, 24 नवम्बर, 1923। परिमल में संकलित)

कठिन शब्द

1. संध्या सुन्दरी - संध्या मानो सुन्दरी की तरह है 2. दिवसावसान - दिवस़अवसान, दिन की समाप्ति, 3. शाम दिवसावसान का समय - शाम ढल रही थी 4. मेघमय - बादलों से भरा हुआ (आकाश) 5. तिमिराञ्चल - अँधेरा 6. मानो संध्या-सुन्दरी के आँचल की तरह है 7. हास-विलास - हँसी और मुस्कुराहट का सौंदर्य 8. हृदय-राज्य की रानी - संध्या मानो उस सितारे के मन-रूपी साम्राज्य की रानी है 9. अभिषेक - मस्तक का शृंगार 10. अलसता की-सी लता - संध्या मानो मादक आलस्य से बनी कोमलांगिनी लता के समान है सखी 11. नीरवता - शाम में फैली हुई खामोशी 12. मानो संध्या-सुन्दरी की सखी की तरह है 13. अम्बर-पथ - आकाश के रास्ते से 14. अनुराग-राग-आलाप -प्रेम के भाव को व्यक्त करने वाली किसी राग-रागिनी को प्रारंभ करने के लिए किया गया सुर का उतार-चढ़ाव 15. नूपुरों - पैर का एक आभूषण जिसमें घूँघरू लगे होते हैं 16. व्योममण्डल - आकाश का पूरा विस्तार 17. जगती-तल - धरती अमर कमलिनी-दल - सदा खिली रहनेवाली कमलिनियों की पंखुड़ियाँ 18. सौन्दर्य-गर्विता-सरिता मानो अपनी सुंदरता के गौरव-भाव के कारण सदा इठला कर प्रवाहित होनेवाली नदी 19. अति विस्तृत वक्षःस्थल - नदी का चौड़ा पाट मानो उसका प्रशस्त और आकर्षक वक्षस्थल है 20. हिमगिरि-अटल-अचल - अटल हिमालय पर्वत 21. उत्ताल-तर.गाघात - ऊँची लहरो. का उठना-गिरना और चोट करना 22. जलधि-प्रबल- विशाल समुद्र 23. प्रलय-घन-गर्जन - प्रलय के बादलो. की तरह की गर्जना में 24. क्षिति - धरती 25. अनिल-अनल - हवा और विद्युत् के आवेश में 26. मदिरा - मादकता 27. विस्मृति - चेतना की पीड़ा से मुक्त हो जाना 28. विरहाकुल कमनीय कण्ठ - विरह से व्याकुल कवि की वाणी 29. विहाग - रात्रि के तीसरे प्रहर में गया जानेवाला वियोग का एक राग

सन्दर्भ और प्रसंग

'संध्या सुन्दरी' निराला की एक प्रसिद्ध कविता है। इसका प्रकाशन साप्ताहिक पत्रिका 'मतवाला' में हुआ था। बाद में यह कविता 'परिमल' (1929) में संकलित हुई। इस कविता में निराला ने शाम की सुंदरता का वर्णन किया है। इसकी मुख्य विशेषता यह है कि इसमें शाम को एक 'सुन्दरी' के रूपक में ढाला गया है। प्रकृति में मनुष्य को देखने की प्रवृत्ति - छायावाद की मुख्य विशेषता है। इस लिहाज से 'संध्या सुन्दरी' छायावाद की एक प्रतिनिधि कविता है।

व्याख्या

दिन समाप्ति की तरफ चल पड़ा है। आसमान बादलों से भरा है। ऐसा लग रहा है कि मेघमय आसमान से संध्या धरती पर धीरे-धीरे उतर रही है। उसका उतरना इतना सुन्दर लग रहा है मानो वह संध्या एक सुन्दरी की तरह हो। आसमान से धरती पर उसका सौन्दर्यपूर्ण तरीके से उतरना ऐसा आभास दे रहा है मानो कोई परी उतर रही हो। उसके आँचल का रंग अँधेरे के रंग से मिलता जुलता है। या यूँ कहें कि शाम का अँधेरा ही उसका आँचल है। संध्या सुन्दरी के तिमिरांचल में किसी तरह की चंचलता या गति का आभास नहीं हो रहा है। आशय यह है कि शाम के समय हवा बिल्कुल रुकी हुई है और अँधेरा धीरे-धीरे गहरा रहा है। उस संध्या सुन्दरी का आगमन पूरी तरह से निःशब्द है। यह संध्या चूँकि सुन्दरी है इसलिए उसके दोनों होंठ निश्चित रूप से मधुर हैं। किन्तु उनमें गम्भीरता भरी है, उनमें अभी किसी तरह की हँसी का सुंदर विलास प्रकट नहीं हो रहा है।

पश्चिम दिशा में निकला हुआ शुक्र ग्रह 'एक तारा' की तरह दिखाई पड़ रहा है और वह हँस रहा है। वह भला प्रसन्न क्यों न हो\ ऐसा लग रहा है मानो संध्या सुन्दरी के, अँधेरे की तरह काले, घुँघराले बालों में उसे गुँथे जाने सौभाग्य प्राप्त हुआ है। वह अपने हृदय के राज्य की रानी की तरह संध्या सुन्दरी का अपनी चमक से अभिषेक कर रहा है।

संध्या सुन्दरी के सौंदर्य के लिए निराला ने इस कविता में दो उपमाओं का उपयोग किया है - 'अलसता की-सी लता' और 'कोमलता की वह कली'। संध्या सुन्दरी में परी की तरह का लास्य-भाव है मानो शृंगारोचित मादक आलस्य से वह भरी है। उसकी कोमलता और

लचक किसी लता की तरह है। निराला दूसरी उपमा में कहते हैं कि वह ऐसी दिख रही है मानो कोमलता ने कली का रूप धारण कर लिया हो। रूपक के भीतर रूप बनाना - छायावादी काव्य-भाषा की एक विशेषता है। निराला इस रूपक को आगे बढ़ाते हुए कुछ और रूपक गढ़ते हैं। संध्या सुन्दरी अपनी सखी 'नीरवता' के कंधे पर अपनी बाँह डालकर किसी छाया की तरह आकाश मार्ग से चल पड़ी है। शाम की खामोशी के साथ संध्या का विस्तार हो रहा है।

संध्या सुन्दरी आसमान से परी की तरह उतर जरूर रही है, मगर उसके हाथों में कोई वीणा नहीं है। वह प्रेम के किसी राग-रागिनी का आलाप भी नहीं ले रही है। उस परी के नूपुरों की भी कोई आवाज नहीं आ रही है। मतलब यह कि वह परी की तरह तो है, मगर उसके हाथों में न तो वीणा है और न ही उसके कंठ से प्रेम का आलाप है। परी होने के बावजूद उस संध्या सुन्दरी के नूपुरों की कोई आवाज सुनाई नहीं पड़ रही है। पूरे वातावरण में केवल एक शब्द अव्यक्त रूप से गूँज रहा है -'चुप चुप चुप'। अर्थात् चारों तरह खामोशी छायी है। खामोशी के साथ अनुगूँज की तरह 'चुप चुप चुप' की ध्वनि मानो पूरे आकाश में फैली है। वह धरती पर भी फैली है।

सोये हुए की तरह, शान्त तालाब में खिली हुई कमलिनियों की पंखुड़ियों पर भी मानो वही ध्वनि छायी हुई है। अपनी सुंदरता से गौरवान्वित होकर प्रवाहित होती हुई नदी के चौड़े पाट-जैसी छाती पर भी मानो यह ध्वनि अवयक्त भाव से मौजूद है। अटल रूप में खड़े हिमालय पर्वत की, धीर-वीर की तरह गम्भीर चोटियों पर, भी यही ध्वनि मौजूद है। प्रलय के बादलों-जैसी गर्जना को, अपने भीतर समेटे हुए समुद्र की ऊँची लहरों के आघात में, भी यह ध्वनि मौजूद है। धरती, जल, नभ, वायु और आकाशीय बिजली के आवेशित कणों में भी 'चुप चुप चुप' की अव्यक्त ध्वनि मौजूद है। ये शब्द सब तरफ गूँजते हुए मालूम पड़ रहे हैं, परन्तु इस बात में कुछ तथ्य भी है क्या? निराला कहते हैं कि इस बात में कोई तथ्यात्मक सत्य नहीं है —"और क्या है? कुछ नहीं।"

संध्या सुन्दरी मदिरा की नदी बहाती हुई-सी आती है। उसका आना मानो एक तरह की मादकता को वातावरण में घोल देता है। वह संध्या सुन्दरी थके हुए प्राणियों को मानो स्नेह का एक प्याला पिला देती है। फिर उन्हें अपनी गोद में लेकर सुलाने लगती है। प्राणियों को सुलाने के क्रम में, चेतना की पीड़ा से मुक्त करने के लिए, विस्मृति के मीठे सपने दिखाती है।

इस तरह धीरे-धीरे संध्या की जगह अब रात लेने लगती है। वह रात की गहराई में लीन होती जाती है। आधी रात के निश्चल वातावरण में मानो संध्या सुन्दरी एकदम-से खोकर लीन हो जाती है। इन तमाम प्रकरणों से गुजरते हुए कवि के मानसिक जगत में प्रेम का भाव जागृत अवस्था में आ जाता है। आधी रात गुजर जाने पर, विरह से आकुल-व्याकुल उसके सुंदर-कोमल कंठ से, विहाग का राग अपने आप निकल पड़ता है।

'संध्या सुन्दरी' का महत्त्व इस बात में है कि इसमें प्रकृति में मनुष्य को देखने का एक सुंदर प्रयास किया गया है। मनुष्य के कोमल भावों को व्यक्त करने का यह रोमानी तरीका निश्चय की मनोरम है।

काव्य सौष्ठव/विशेष

- संध्या को सुन्दरी के रूपक में प्रस्तुत करते हुए यह कविता रची गयी है।
- पूरी कविता मानवीकरण का सुन्दर उदाहरण है।
- छायावाद की प्रकृतिपरकता को व्यक्त करनेवाली यह एक श्रेष्ठ कविता है।
- इसकी पंक्तियों में छंद की एकरूपता नहीं है। मात्रा या वर्ण की दृष्टि से कोई क्रम नहीं अपनाया गया है, मगर मात्रिक छन्द का प्रवाह पूरी कविता में मौजूद है।

- यह कविता प्रकृति-चित्रण मात्र नहीं है। छायावाद की प्रवृत्ति की तरह ही इसमें प्रकृति केवल उद्दीपन की तरह नहीं आयी है, बल्कि वह आलंबन की तरह चित्रित हुई है।

दो

तोड़ती पत्थर

वह तोड़ती पत्थर;
देखा उसे मैंने इलाहाबाद के पथ पर-
वह तोड़ती पत्थर ।

कोई न छायादार
पेड़ वह जिसके तले बैठी हुई स्वीकार;
श्याम तन, भर बँधा यौवन,
नत नयन, प्रिय कर्मरत मन,
गुरु हथौड़ा हाथ,
करती बार-बार प्रहार -
सामने तरु-मालिका अट्टालिका प्राकार ।

चढ़ रही थी धूप;
गर्मियों के दिन
दिवा का तमतमाता रूपय
उठी झुलसती हुई लू,
रुई ज्यों जलती हुई भू,
गर्द चिनगीं छा गयीं,

प्रायः हुई दुपहर :-
वह तोड़ती पत्थर ।

देखते देखा मुझे तो एक बार
उस भवन की ओर देखा, छिन्नतार;
देखकर कोई नहीं,
देखा मुझे उस -दृष्टि से
जो मार खा रोयी नहीं,
सजा सहज सितार,
सुनी मैंने वह नहीं जो थी सुनी झंकार
एक क्षण के बाद वह काँपी सुघर,
ढुलक माथे से गिरे सीकर,
लीन होते कर्म में फिर ज्यों कहा-
'मैं तोड़ती पत्थर ।'

(रचनाकाल : 4 अप्रैल, 1937 'सुधा', मासिक, लखनऊ, मई, 1937, में प्रकाशित। द्वितीय अनामिका में संकलित।)

सन्दर्भ और प्रसंग

'तोड़ती पत्थर' कविता छायावाद और प्रगतिवाद के सन्धिस्थल पर मौजूद एक कविता है। इसकी रचना छायावाद की समाप्ति और प्रगतिवाद के प्रारंभ के दौर में हुई। यही कारण है कि इस कविता में छायावाद और प्रगतिवाद-दोनों के गुण पाए जाते हैं। यह कविता लखनऊ से प्रकाशित होनेवाली मासिक पत्रिका 'सुधा' के मई, 1937 के अंक में प्रकाशित

हुई थी। निराला ने इसे अप्रैल के महीने में लिखा था। किसी मजदूरनी को केंद्र में रखकर लिखी गयी इतनी महत्त्वपूर्ण कविता इससे पहले नहीं मिलती है। यह कविता 1939 में दूसरी बार प्रकाशित 'अनामिका' में संगृहीत हुई।

व्याख्या :

निराला लिखते है कि मैंने पत्थर तोड़ती हुई मजदूरनी को इलाहाबाद की एक सड़क पर देखा। वह लगातार पत्थर तोड़ती जाती थी।

वह मजदूरनी सड़क के किनारे जिस जगह पर बैठकर पत्थर तोड़ रही थी, वहाँ कोई छायादार पेड़ नहीं था। वह धूप में काम कर रही थी। मजदूरनी गहरे साँवले या काले रंग की थी। वह श्याम तन थी, युवावस्था के अनुकूल उसका शारीरिक विन्यास था। उसके भरे बदन में मानो यौवन बँधा हुआ था। काम करते हुए उसकी आँखें झुकी हुई थीं। वह ऐसे काम कर रही थी, मानो यह उसका अत्यंत प्रिय काम हो और वह मन लगाकर इस काम को कर रही हो। (हालाँकि यह सच्चाई नहीं थी।) उसके हाथ में भारी हथौड़ा था, जिससे वह पत्थर पर लगातार प्रहार कर रही थी। वह मजदूरनी जहाँ काम कर रही थी उसके सामने ही एक बहुत बड़ा भवन (अट्टालिका) था। उस अट्टालिका को घेरती हुई चहारदीवारी थी और उसके भीतर छायादार पेड़ों की क्रमबद्ध पंक्तियाँ थीं। धूप और छाया, श्रम और विलास के अंतर्विरोध को प्रकट करने के लिए निराला ने मानो यह दृश्य रखा है। एक तरफ कड़ी धूप में कठोर श्रम करती मजदूरनी और दूसरी तरफ छायादार वृक्षों की छाया से घिरी अट्टालिका।

कठिन शब्द

1.तोड़ती पत्थर - पत्थर तोडती हुई मजदूरनी 2. श्याम तन - साँवला या काला रंग है मजदूरनी का 3. भर बँधा यौवन - युवावस्था के अनुकूल भरा-पूरा व्यक्तित्व है उस मजदूरनी का 4.नत नयन - उसकी निगाहें झुकी हुई हैं 5.प्रिय कर्मरत मन - वह इस भाव से पत्थर तोड़ रही है मानो यह उसका अत्यंत प्रिय काम हो 6.गुरु हथौड़ा हाथ - उसके हाथ में भारी हथौड़ा है 7.तरु-मालिका - पेड़ों की क्रमबद्ध पंक्तियाँ 8. अट्टालिका - बहुत बड़ा भवन 9.प्राकार - चहारदीवारी 10. दिवा - दिन तमतमाता 11.रूप - अत्यधिक गर्मी के कारण दिन तमतमाता हुआ लग रहा है 12.ज्यों - जैसे, मानो 13.गर्द चिनगीं - गर्मी के कारण धूलकण चिंगारी की तरह गर्म लग रहे हैं 14. छिन्नतार - उड़ती निगाहों से 15.सीकर - पसीना

गर्मियों के दिन थे और धूप चढ़ रही थी। किसी के तमतमाए चेहरे की तरह दिन की छवि मालूम पड़ रही थी। गर्म हवा ऐसे चल रही थी कि चेहरे पर लगते ही मानो चेहरे को झुलसा दे रही थी। धरती मानो रुई की तरह जल रही थी। मारे गर्मी के धरती तपन छोड़ रही थी। हवा में उड़ता धूलकण चिंगारी की तरह गर्म था और बदन से सट जाए तो ऐसा लगता था मानो किसी चिंगारी ने छू लिया हो।

इसी तरह समय गुजरा और धीरे-धीरे दोपहर हो गयी। वह पत्थर तोड़ती रही।

उस घटना के जिक्र को आगे बढ़ाते हुए निराला कहते हैं कि उस मजदूरनी ने महसूस किया कि मैं उसे देख रहा हूँ। तब उसने उस अट्टालिका की तरफ उड़ती निगाहों से देखा। जब वह इत्मीनान हो गयी कि उस अट्टालिका से उस पर नजर रखनेवाला कोई नहीं है, तब उसने कवि की तरफ देखा। निराला बताते हैं कि उसने मुझे उस दृष्टि से देखा, जो मार खाने के बाद, न रोने के लिए विवश कर दी गयी हो। उसकी निगाहों ने मुझ पर अद्‌भुत प्रभाव डाला। मुझे ऐसा लगा मानो मेरा हृदय एक सितार की तरह झंकृत होने के लिए सज कर तैयार हो गया हो। उसके बाद मेरे हृदय-रूपी सितार से जो संगीत उत्पन्न हुआ, वह मेरे लिए नया था। मैंने अपने ही हृदय की ऐसी झंकार इससे पहले कभी नहीं सुनी थी। यह सब मानो एक क्षण के भीतर घटित हो गया। वह मजदूरनी मानो तत्क्षण सम्भलती हुई काँप-सी गयी। कंपन के कारण उसके माथे से पसीने की बूँदें

ढुलक कर गिर गयीं। उसके बाद वह पत्थर तोड़ने के काम में ऐसे लग गई मानो वह कह रही हो कि मैं पत्थर (जड़ व्यवस्था) तोड़ रही हूँ। 'जड़ व्यवस्था' को तोड़नेवाली बात निराला ने स्वयं कही थी। उन्होंने अपनी कई कविताओं के बारे में टिप्पणी की थी कि किस जगह किस तरह का अर्थ लेना चाहिए।

काव्य सौष्ठव/विशेष

- मजदूरनी पर लिखी गयी यह एक दुर्लभ कविता है।
- इसमें छायावाद की भावुकता और प्रगतिवाद की यथार्थता का मिश्रण है।
- इस कविता में मुक्त छन्द और छंदोबद्ध - दोनों तरह की पंक्तियाँ हैं।
- मुक्त छंद की पंक्तियों में लगभग 12 और 24 मात्राओं की आवृत्ति को अपनाया गया है।
- "श्याम तन, भर बँधा यौवन

  ''नत नयन, प्रिय कर्मरत मन" - में सममात्रिक छन्द का उपयोग किया गया है। दोनों पंक्तियों में 14-14 मात्राएँ हैं। 5 वीं और 9 वीं मात्रा पर यति है।
- यह कविता सर्वहारा वर्ग के प्रति अपनी पक्षधरता को प्रकट करती है।

तीन

बादल राग

झूम-झूम मृदु गरज-गरज घन घोर।
राग-अमर। अम्बर में भर निज रोर।

झर झर झर निर्झर-गिरि-सर में,
घर, मरु, तरु-मर्मर, सागर में,
सरित— तड़ित-गति- चकित पवन में
मन में, विजन-गहन-कानन में,
आनन-आनन में, रव-घोर-कठोर-
राग-अमर। अंबर में भर निज रोर।

अरे वर्ष के हर्ष ।
बरस तू, बरस-बरस रसधार।
पार ले चल तू मुझको,
बहा, दिखा मुझको भी निज
गर्जन-गौरव-संसार।
उथल-पुथल कर हृदय-
मचा हलचल-
चल रे चल,-
मेरे पागल बादल।
धँसता दलदल,
हँसता है नद खल् खल्
बहता, कहता कुलकुल कलकल कलकल।
देख-देख नाचता हृदय
बहने को महाविकल-बेकल,
इस मरोर से- इसी शोर से-

सघन घोर गुरु गहन रोर से
मुझे- गगन का दिखा सघन वह छोर।
राग-अमर। अम्बर में भर निज रोर।

(मतवाला', साप्ताहिक, कलकत्ता, के 26 जुलाई, 1924 में प्रकाशित । परिमल में संकलित)

सन्दर्भ और प्रसंग

यह कविता कलकत्ते से प्रकाशित होनेवाली साप्ताहिक पत्रिका 'मतवाला' में 26 जुलाई, 1924 को प्रकाशित हुई थी। बाद में यह 'परिमल' (1929) में संगृहीत हुई। छायावादी दौर की कविता होने के बावजूद यह कविता किसान-चेतना की कविता के रूप में पहचानी गयी। इसके यथार्थवादी रुझान को भी आलोचकों के द्वारा रेखांकित किया गया। छायावाद के भीतर मौजूद यथार्थ-चेतना के सशक्त प्रमाण के रूप में 'बादल राग' शृंखला की कविताओं को पहचान मिली। इस श्रृंखला में कुल छह कविताएँ लिखी गयी थीं। इनका प्रकाशन जुलाई, अगस्त और सितम्बर, 1924 के कुल छह अंकों में, साप्ताहिक पत्रिका 'मतवाला' में, हुआ था।

कठिन शब्द

1. बादल राग - बादलों की ध्वनि को निराला ने 'बादल राग' कहा है 2. घन घोर - ग.भीर, अत्यधिक गाढ़ा या गहरा 3. राग-अमर - प्रकृति ने बादलो को ध्वनि दी है, जो सृष्टि के प्रारंभ से मौजूद है और आगे भी इसे रहना है यही कारण है कि निराला ने इस राग को अमर राग कहा है 4. रोर - तेज और ग.भीर आवाज 5. निर्झर-गिरि-सर में - झरने, पर्वत और तालाब में 6. मरु - रेगिस्तान 7. तरु-मर्मर - कोमल ध्वनि वाले पत्तों से युक्त वृक्षों पर 8. सरित् - सरिता, नदी 9. तड़ित-गति - आकाशीय बिजली की क्षिप्रगति चकित पवन -दिशाहीन होकर बहती हवा मानो चौ.की हुई है 10. विजन-गहन-कानन में - जनशून्य घने जंगलों में 11. आनन-आनन में- एक-एक व्यक्ति के चेहरे पर 12. रव-घोर-कठोर - हे बादल तुम्हारी आवाज में गम्भीरता और वीरोचित कठोरता है 13. वर्ष के हर्ष - हे बादल तुम पूरे वर्ष भर की खुशी का आधार हो, तुम्हारा होना ही पूरे साल की फसल और प्रकृति को तय करता है 14. रसधार - तुम रस की धारा की तरह पानी बरसाओ 15. गर्जन-गौरव-संसार - गौरवशाली गर्जनाओं से भरा हुआ बादल का संसार 16. नद - बड़ी नदी 17. खल् खल् - किसी विराट के हँसने की ध्वनि 18. कुलकुल - कोमल ध्वनि में प्रवाह 19. कलकल - प्रिय और मधुर ध्वनि में प्रवाह 20. महाविकल- अत्यधिक व्याकुल या बेचैन 21. बेकल -बेचैन, जिसे धैर्य न हो 22. मरोर - करवट या अँगड़ाई ले-लेकर लहरों की तरह प्रवाहित होना 23. गुरु गहन रोर -गम्भीर और गहरी-भारी आवाज

व्याख्या

निराला 'बादल राग' कविता में बादल को सम्बोधित करते हुए कहते हैं कि तुम झूम-झूम कर कोमल और गम्भीर आवाज में गरजो। तुम्हारा राग 'अमर राग' है। 'अमर राग' से निराला का तात्पर्य यह है कि बादल जिस राग में ध्वनित होते हैं वह राग शाश्वत है। सृष्टि के प्रारम्भ से लेकर आज तक यह राग कायम है, इसलिए यह 'अमर राग' है। संगीत के न जाने कितने राग बने और समाप्त हो गए। हे बादल। तुम आकाश में अपनी गर्जना भर दो।

निर्झर, पर्वत, सरोवर, घर, रेगिस्तान, वृक्ष, समुद्र आदि पर तुम झरते हुए बरसो। तुम नदियों पर बरसो। आकाशीय बिजली की चंचलता से चकित पवन पर भी तुम बरसो। तुम लोगों के मन पर बरसो। तुम निर्जन घने जंगलों पर बरसो। हे बादल। तुम प्रत्येक चेहरे को भिगो दो। और फिर इन सबमें अपनी गम्भीर-कठोर ध्वनि की अनुगूँज उत्पन्न कर दो।

हे बादल। तुम पूरे वर्ष की खुशी का आधार हो। अच्छी बरसात होने पर पूरा साल सुख-सम्पन्नता के साथ बीत जाता है। इसलिए तुम्हारा होना हमारी खुशी का प्रमाण है। तुम बरसो, रस की धारा की तरह बरसो। तुमसे एक अनुरोध करता हूँ कि तुम मुझे अपने पीछे के संसार को दिखाओ।

बादलों के पार, गर्जन का जो गौरवशाली संसार है, कवि वहाँ तक पहुँचना चाहता है।

हे बादल। तुम मुझे मेरी भावुकता में बहाते हुए ले चलो और अपने गर्जन-गौरव का संसार दिखा दो। उसे देखने की इच्छा मेरे मन में बसी हुई है। तुम्हें देखकर कई तरह के भाव मेरे मन में जन्म लेते हैं। मेरा हृदय उथल-पुथल से भर जाता है। हे बादल। तुम हलचल मचा दो। तुम चलते रहो। चलते रहो। मुझे लगता है कि तुममें एक तरह की दीवानगी है। मेरे प्यारे पगले बादल। अरे दलदल पर बरस कर तुमने उसे और धँसने लायक बना दिया। वह तो पहले से ही कीचड़-कीचड़ था। तुमने उसे और गीला बना दिया। विशाल नदियों में तुमने इतना पानी भर दिया कि वे अपने पाट को चौड़ा करके खलखलाती हुई अट्टहास कर रही हैं। उन नदियों में हर्ष की ध्वनि भी कुलकुल कलकल के रूप में सुनाई पड़ रही है।

यह सब देखकर मेरा हृदय नाचने लगता है। चारों तरफ प्रवाह ही प्रवाह है। मेरा मन भी महाविकल होकर प्रवाहित होने लगता है। वह बेचैन होने लगता है। यह सब तुम्हारा असर है।

अंतिम बात यह कि तुम ऐसी ही अँगड़ाइयाँ लेते हुए, शोर मचाते हुए, गुरु-गम्भीर और घनीभूत ध्वनियों से युक्त रहकर मुझे गगन के उस दूसरे छोर को दिखला दो। मैं तुम्हारी पृष्ठभूमि को देखना चाहता हूँ। मैं जानना चाहता हूँ कि तुम्हें यह सब बल-वैभव कहाँ से मिलता है। तुम्हारे पार के संसार को देखकर शायद यह सब जाना जा सके।

हे बादल तुम अपने अमर राग - 'बादल राग' - को आकाश में अनुगूँज की तरह भर दो।

काव्य सौष्ठव/विशेष

- छायावादी शैली में लिखी गयी यथार्थवादी चेतना की कविता है यह।
- इस शृंखला की सभी छह कविताओं को पढ़ने पर यह यथार्थ-चेतना ज्यादा स्पष्ट होती है।
- इस शृंखला की अंतिम कविता की ये पंक्तियाँ ध्यान देने लायक हैं - "जीर्ण बाहु, है शीर्ण शरीर,तुझे बुलाता कृषक अधीर,/ऐ विप्लव के वीर।" - इन पंक्तियों में किसान की चर्चा है और बादल को क्रांति के प्रतीक के रूप में भी देखा गया है।
- इस कविता में 19-19 मात्राओं की पंक्तियों को मूल आधार बनाया गया है। पंक्ति संख्या - 1, 2, 7, 8, 20, 25 एवं 26 में 19-19 मात्राएँ हैं। बीच में 16, 11, 13, 14, 7, 6, 8 मात्राओं से बनी भिन्न-भिन्न आकार की पंक्तियाँ हैं। निराला ने छायावाद के प्रारंभ से ही छन्द-सम्बन्धी कई प्रयोग किए थे।

चार

भिक्षुक

वह आता-
दो टूक कलेजे के करता पछताता
पथ पर आता ।

पेट-पीठ दोनों मिलकर हैं एक,
चल रहा लकुटिया टेक,
मुट्ठी-भर दाने को -भूख मिटाने को
मुँह फटी पुरानी झोली का फैलाता-
दो टूक कलेजे के करता पछताता पथ पर आता ।

साथ में दो बच्चे भी हैं सदा हाथ फैलाये,
बायें से वे मलते हुए पेट को चलते,
और दाहिना दया-दृष्टि पाने की ओर बढ़ाये ।
भूख से सूख ओंठ जब जाते
दाता - भाग्य-विधाता से क्या पाते?-
घूँट आँसुओं के पीकर रह जाते ।
चाट रहे जूठी पत्तल वे सभी सड़क पर खड़े हुए,
और झपट लेने को उनसे कुत्ते भी हैं अड़े हुए ।

('मतवाला', साप्ताहिक, कलकत्ता, 17 नवम्बर, 1923 । परिमल में संकलित)

सन्दर्भ और प्रसंग

यह कविता एक भिखारी को आधार बनाकर लिखी गयी है। इसमें उस भिखारी के साथ दो बच्चे भी हैं। उनकी उपस्थिति इस कविता की मार्मिकता को और बढ़ा दे रही है। कविता का चरम-बिंदु है - जूठी पत्तलों को झपट लेने के लिए कुत्तों का अड़ जाना। 'भिक्षुक' कविता कलकत्ते से निकलने वाली साप्ताहिक पत्रिका 'मतवाला' में 17 नवम्बर, 1923 को प्रकाशित हुई थी। बाद में यह कविता 'परिमल' (1929) में संगृहीत हुई। इससे पहले भिक्षुक को विषय बनाकर इतनी अच्छी कविता नहीं लिखी जा सकी थी। कविताओं में भिखारियों की चर्चा तो मिल जाती थी, मगर भिखारी को केंद्र में रखकर कोई कविता नहीं लिखी गयी थी।

कठिन शब्द

1. दो टूक कलेजे के - मन को भावुक करता हुआ 2. पछताता - पश्चाताप, 3.भिक्षुक का जीवन मानो पछतावे का मूर्त रूप हो 4.लकुटिया टेक -लाठी का सहारा लेना 5. दाता - भिक्षा देनेवाला 6. भाग्य-विधाता - भिक्षा देनेवाले मानो उसके भाग्य का निर्णय करनेवालों में से हैं।

वह इतना दुबला है कि उसका पेट और उसकी पीठ - दोनों मिलकर मानो एक हो गए हैं। कमजोरी के मारे वह एक पतली-सी लाठी टेकते हुए चल रहा है। वह एक फटी-पुरानी झोली लेकर चलता है। अपनी भूख मिटाने के लिए उसे मुट्ठी-भर अनाज की उम्मीद जहाँ भी दिखती है, वहाँ झोली का मुँह फैला देता है। उसका रास्ते पर चलते हुए दिख जाना मन को भावुकता से भर देता है। उसकी जिन्दगी मानो एक तरह का अफसोस है।

उसके साथ दो बच्चे भी हैं। वे बच्चे लगातार हाथ फैलाकर माँगने की मुद्रा बनाए हुए हैं। वे बच्चे बाएँ हाथ से अपने भूखे पेट को दबा रहे हैं और दाहिना हाथ लोगों की दया-दृष्टि पाने के लिए बढाए हुए हैं। उन्हें उम्मीद है कि दया आने पर लोग उसके हाथ पर कुछ रख देंगे।

मारे भूख के उनके होंठ सूख जाते हैं। उन्होंने जिन्हें 'दाता' समझ रखा था, जिन्हें अपने 'भाग्य' का 'विधाता' समझ रखा था — उनसे भी कुछ प्राप्त न हो पाने की स्थिति में बेचारे आँसुओं के घूँट पीकर रह जाते हैं। भूख और उपेक्षा से उत्पन्न मन की बेचौनी को दबा लेने के अलावा उनके पास और रास्ता ही क्या है?

वे अमानवीयता की स्थिति तक पहुँचकर अपना जीवन जी रहे हैं। सड़क पर फेंकी हुई जूठी पत्तलों को चाट करकर अपनी भूख मिटाने की कोशिश मानो इस विकट स्थिति का चरम है। इस स्थिति की विद्रूपता तब और बढ़ जाती है जब निराला कहते हैं कि उन जूठी पत्तलों को उनसे छीन लेने के लिए कुत्ते भी अड़े हुए हैं। वे कुत्ते भी मानो समझ रहे हैं कि ये भिखारी नाम-मात्र के मनुष्य हैं, इनसे डरने की जरूरत नहीं है। ये हमारी तरह की ही जिंदगी जी रहे हैं।

कुल मिलाकर यह कविता भिक्षुक की अमानवीय स्थिति का मार्मिक चित्रण है।

काव्य सौष्ठव / विशेष

- छायावादी दौर में लिखी गयी यह कविता छायावाद की मनोभूमि से भिन्न प्रकृति की है।
- इसमें छायावाद की कोई भी प्रवृत्ति दिखाई नहीं पड़ती है।
- निराला के प्रयोगधर्मी व्यक्तित्व और यथार्थ-चेतना का एक सुंदर नमूना है यह कविता।
- इस कविता की महत्ता का एक कारण यह भी है कि यह जिस समय लिखी गयी थी उस समय इस मिजाज की कविताएँ प्रायः नहीं लिखी जा रही थी। यह अपने समय से आगे की कविता थी।
- इस कविता में मुक्त छन्द का उपयोग किया गया है। कविता के मूल में 22-22 मात्राओं की कुछ पंक्तियाँ हैं। 6 मात्रा से शुरू होकर अंत में 29-29 मात्राओं की दो पंक्तियों से यह कविता निर्मित हुई है।

बोध प्रश्न 1

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर संक्षेप में दें।

1. संध्या सुन्दरी आसमान से किस रूप में उतर रही है?

.....

.....

.....

.....

2. 'संध्या सुन्दरी' कविता का क्या महत्त्व है?

.....

.....

.....

.....

.....

3. 'तोड़ती पत्थर' कविता का क्या महत्त्व है?

.....

.....

.....

.....

.....

4. 'बादल राग' कविता का मुख्य अभिप्राय क्या है ?

.....

.....

.....

.....

5. 'भिक्षुक' कविता के महत्त्व पर प्रकाश डालें।

.....

.....

.....

.....

6. नीचे प्रश्न के साथ कुछ विकल्प दिए जा रहे है। उत्तर के लिए सही विकल्प को चिन्हित कीजिए।

i. 'संध्या सुन्दरी' शीर्षक कविता किस पुस्तक में है?

क) अनामिका ख) परिमल ग) गीतिका घ) बेला

ii. 'संध्या सुन्दरी' किस प्रकार की कविता है?

क) छायावादी ख) प्रगतिवादी ग) प्रयोगवादी घ) रीतिवादी

iii. 'संध्या सुन्दरी' में कौन-सा अलंकार है?

क) उपमा ख) रूपक ग) रूपकातिशयोक्ति घ) उत्प्रेक्षा

iv. 'क्षिति' का क्या अर्थ है?

क) सुबह ख) क्षितिज ग) आकाश घ) धरती

v. 'तोड़ती पत्थर' कविता में किस शहर का जिक्र है ?

क) बनारस ख) कलकत्ता ग) इलाहाबाद घ) प्रयागराज

vi. 'सीकर' शब्द का क्या अर्थ है ?

क) जंजीर ख) पसीना ग) चीनी का घोल घ) शराब

vii. 'रुई ज्यों जलती हुई भू,' में कौन-सा अलंकार है ?

क) व्यतिरेक ख) असंगति ग) रूपक घ) उत्प्रेक्षा

viii. 'तोड़ती पत्थर' कविता का प्रथम प्रकाशन कब हुआ था?

क) 1937 ख) 1935 ग) 1938 घ) 1934

ix. 'बादल राग' शृंखला में निराला ने कुल कितनी कविताएँ लिखी थीं ?

क) 10 ख) 4 ग) 9 घ) 6

x. निराला ने बादल को निम्नलिखित में से क्या कहा है?

क) तड़ित-गति ख) विजन-गहन-कानन ग) वर्ष के हर्ष
घ) गुरु गहन रोर

xi. 'बादल राग' का प्रकाशन-वर्ष बताएँ?

क) 1924 ख) 1925 ग) 1932 घ) 1936

xii. 'कानन' का अर्थ बताएँ ?

क) तड़ित ख) आकाश ग) बादल घ) जंगल

xiii. 'भिक्षुक' का प्रकाशन कब हुआ था?

क) 1938 ख) 1925 ग) 1935 घ) 1923

vx. 'लकुटिया' का क्या अर्थ है?

क) लँगोट ख) छोटा लोटा ग) छोटी लाठी घ) रस्सी

xv. जूठी पत्तल कौन झपट लेने को तैयार है ?

क) कुत्ते ख) भिक्षुक ग) कूड़ा बीनने वाला घ) सफाईकर्मी

xvi. 'भिक्षुक' किस दौर की कविता है ?

क) छायावादी ख) प्रगतिवादी ग) प्रयोगवादी घ) द्विवेदी-युगीन

15.3 सारांश

इस इकाई में आपने छायावाद के प्रतिनिधि कवि सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' की चार महत्वपूर्ण कविताओं का पाठ और उनके विश्लेषण का अध्ययन किया। इन कविताओं के मूल प्रतिपाद्य को सारांश के रूप में इस प्रकार प्रस्तुत किया जा सकता है -

- निराला ने इस कविता में 'संध्या सुन्दरी' का चित्रण किया है। इसके लिए उन्होंने सुन्दरी के रूपक का उपयोग किया है। संध्या के क्रमशः विस्तार को प्रकृति के विभिन्न घटकों में दिखाते हुए सौन्दर्य की सृष्टि करना इस कविता का लक्ष्य है। कविता के अंत में एक भावुक माहौल बनाया गया है और उसे कवि की रचनात्मकता से जोड़ा गया है।

- 'तोड़ती पत्थर' कविता में निराला ने इलाहाबाद की एक सड़क पर एक मजदूरनी को देखा था। एक स्त्री बनाम पत्थर तोड़ने-जैसा कठोर श्रम इस विरोधी स्थिति को प्रकट करते हुए कविता को मानवीय भावुकता तक पहुँचाया गया है। अंत में व्यवस्था की जड़ता को तोड़ने का सांकेतिक संकल्प भी व्यक्त हुआ है।

- निराला ने 'बादल राग' कविता में बादलों को सम्बोधित करके अपनी बातें कही हैं। बादल से उत्पन्न संगीत को वे 'बादल राग' कह रहे हैं और इसे 'अमर राग' के रूप में दर्ज कर रहे हैं। बारिश की सर्व व्यापकता को चिह्नित करती हुई यह कविता उसके मंगलकारी रूप को प्रकट करती है। 'अनंत' और 'उस पार' की जिज्ञासा से भी यह कविता जुड़ी हुई है। मनुष्य, प्रकृति और अज्ञात के त्रिकोण से बनी यह कविता छायावादी सम्वेदना को तो प्रकट करती ही है, इसकी यथार्थ-चेतना भी आलोचना के क्षेत्र में चर्चित रही है।

- निराला ने 'भिक्षुक' कविता में एक भिखारी की दयनीय अवस्था का चित्रण किया है। साथ में उसके दो बच्चे भी हैं। उसका स्वास्थ्य अत्यंत बुरी स्थिति में है। मनुष्य होते हुए भी वह इतना विरूप है कि कुत्ते भी उसे मनुष्य मानने को तैयार नहीं हैं। यह कविता यह भी इशारा करती है कि जो लोग मनुष्य के समाज का 'भाग्य विधाता' होने का गौरव पालते हैं, उनके पास भी इनके कल्याण की कोई -दृष्टि नहीं है।

15.4 उपयोगी पुस्तकें

1. निराला - नंददुलारे वाजपेयी, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, नई दिल्ली
2. निराला की साहित्य-साधना - रामविलास शर्मा, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली
3. निराला - कृति से साक्षात्कार - नंद किशोर नवल, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली
4. निराला काव्य-कोश - कमलेश वर्मा, संस्कृति प्रकाशन, भागलपुर
5. छायावादी काव्य-कोश - कमलेश वर्मा, सुचिता वर्मा, द मार्जिनलाइज्ड प्रकाशन, मैदानगढ़ी, दिल्ली

15.5 बोध प्रश्नों /अभ्यासों के उत्तर

1. संध्या सुन्दरी आसमान से परी की तरह उतर रही है। उतरते समय उसका काला आँचल मानो अँधेरा फैला रहा है। वह अत्यंत शान्त भाव से उतर रही है। वह अलसायी हुई-सी है। वह अपनी सखी 'नीरवता' के कंधे का सहारा लेकर आकाश-मार्ग से उतर रही है।

2. 'संध्या सुन्दरी' कविता में छायावादी शैली की सुंदर अभिव्यक्ति हुई है। प्रकृति पर मनुष्य का आरोप करके कविता लिखने की प्रवृत्ति का यह सुंदर उदाहरण है। शाम होना प्रकृति की घटना है। शाम के विवरण में 'सुन्दरी' का आरोप करते हुए कविता का विस्तार किया गया है। शाम का आना किसी सुन्दरी के आगमन की तरह सुंदर और रोमानी बनाया गया है।

3. 'तोड़ती पत्थर' कविता छायावाद और प्रगतिवाद के मिलन-बिंदु पर रची गयी कविता है। इसमें इन दोनों काव्य-प्रवृत्तियों को देखा जा सकता है। इसमें मजदूरनी के कर्म-कौशल और उसके व्यक्तित्व को जिस तरह से प्रकट किया गया है, उसमें छायावादी झुकाव मौजूद है। मजदूरनी को कविता का विषय बनाना और उसकी विषम स्थिति को प्रकट करने का प्रयास, इस कविता को प्रगतिवाद की तरफ ले जाता है। इस कविता की भाषा और छन्द-विधान पर भी इन दोनों युगों का प्रभाव है। यह हिंदी की पहली महत्त्वपूर्ण कविता है जिसमें मजदूरनी को काव्य-वस्तु के रूप में चुना गया है।

4. 'बादल राग' कविता का मुख्य अभिप्राय है विराट का जन-जन तक पहुँचना। बादल विराट हैं, वे सृष्टि के प्रारंभ से हैं। वे अमर राग में कोमलता और गर्जना से गाते हैं। निराला ने इस कविता में बादल से अपील की है कि तुम अपनी बारिश लेकर सब जगह जाओ। झरना, पर्वत, तालाब, नदी, पवन आदि-आदि को अपनी जलधारा से रससिक्त कर दो। सबको सराबोर कर दो। इसी अर्थ में यह कविता विराट को जन-जन तक पहुँचाने का काम कर रही है।

5. 'भिक्षुक' कविता 1923 में लिखी गयी। छायावाद के दौर में लिखी गयी यह यथार्थवादी कविता है। इसकी भाषा में बोलचाल की मात्रा अधिक है। इसका छंद-विन्यास भी मुक्तता लिए हुए है। सामाजिक यथार्थ को व्यक्त करती यह रचना केवल

काव्यात्मक न्याय तक सीमित नहीं है। इसमें 'भाग्य-विधाता' का भी जिक्र है। रवीन्द्रनाथ टैगोर ने 'जन-गण-मन' की रचना इसके काफी पहले कर दी थी। कलकत्ते के कांग्रेस अधिवेशन में इस गीत को 1911 में गाया गया था। इस गीत में 'भाग्य-विधाता' था। निराला 1923 में 'भाग्य-विधाता' पर अफसोस प्रकट कर रहे थे क्योंकि भिक्षुक के भाग्य का विधाता वह बन नहीं पा रहा था। जो भिक्षुक के मामूली-से भाग्य के लिए कुछ न कर सके, उस पर संदेह तो किया ही जाना चाहिए। यह कविता बता रही थी कि मनुष्य का एक रूप ऐसा भी मौजूद है जिसकी हालत गली के कुत्ते-जैसी है। यह कविता हिंदी कविता की तत्कालीन स्थिति से काफी आगे जाकर, सृजन के दायित्व को, सामाजिक राह दिखा रही थी।

6. i) ख

ii) क

iii) ख

iv) घ

v) ग

vi) ख

vii) घ

viii) क

ix) घ

x) ग

xi) क

xii) घ

xiii) घ

xiv) ग

xv) क

xvi) क

इकाई 16 काव्य वाचन एवं विश्लेषण : सुमित्रानंदन पंत

इकाई की रूपरेखा

16.0 उद्देश्य

16.1 प्रस्तावना

16.2 चयनित कविताओं का पाठ और विश्लेषण

16.3 सारांश

16.4 उपयोगी पुस्तकें

16.5 बोध प्रश्नों/अभ्यासों के उत्तर

16.0 उद्देश्य

यह इकाई सुमित्रानंदन पंत के काव्य वाचन एवं विश्लेषण से संबंधित है। इस इकाई को पढ़ने के बाद आपः

- सुमित्रानंदन पंत की तीन कविताओं की विस्तृत व्याख्या कर सकेंगे;
- पंत की कविताओं की व्याख्या की दिशाओं को जान सकेंगे;
- इन कविताओं के माध्यम से छायावाद की विशिष्टताओं को जान सकेंगे;
- पंत की काव्य-भाषा को समझने का प्रयास है;
- पंत की शब्द-योजना और शब्दावली को जान सकेंगे।

16.1 प्रस्तावना

सुमित्रानंदन पन्त का जन्म 20 मई, 1900 को हुआ था। वे कौसानी, अल्मोड़ा (उत्तराखंड) के रहनेवाले थे। उनके बचपन का नाम गोसाईंदत्त था। जन्म के समय माँ की मृत्यु हो जाने के कारण पंत का बचपन भावनात्मक रूप से एक खास प्रकार की दशा में गुजरा था। एक समृद्ध परिवार में जन्म लेने के कारण उन्हें पढ़ाई-लिखाई की समुचित व्यवस्था मिली थी। अत्यंत कम उम्र से ही उनमें काव्य-प्रतिभा दिखाई पड़ने लगी थी। स्कूल के कार्यक्रमों में कविता के कई पुरस्कार उन्होंने कम ही उम्र में प्राप्त किए। अल्मोड़ा और इलाहाबाद में उनकी पढ़ाई-लिखाई हुई। 1921 में असहयोग आन्दोलन से प्रभावित होकर उन्होंने कॉलेज की पढ़ाई छोड़ दी। इस तरह उनकी औपचारिक शिक्षा इंटरमीडिएट तक ही हो पायी।

अपना नाम उन्होंने खुद बदला था। महज 10 साल की उम्र में उन्होंने अपना नाम गोसाईंदत्त से बदलकर सुमित्रानंदन रख लिया था। साहित्य के प्रति अत्यधिक लगाव के कारण 15 साल की उम्र में ही उन्होंने स्थायी लेखन की शुरुआत कर दी थी। उनकी कविताओं के प्रकाशन की शुरुआत 'सुधाकर' नामक हस्तलिखित पत्रिका से हुई और जल्दी ही 'अलमोड़ा अखबार', 'मर्यादा' आदि पत्रिकाओं में उनकी रचनाएँ छपने लगीं। उन्होंने 'रूपाभ' नामक पत्रिका का संपादन भी किया। उनकी वैचारिकी पर कार्ल मार्क्स, महात्मा गाँधी, रवीन्द्रनाथ टैगोर तथा अरविन्द के विचारों का असर अलग-अलग समय पर पड़ा। उन्हें ढेर सारे पुरस्कार और सम्मान प्राप्त हुए -भारतीय ज्ञानपीठ पुरस्कार, साहित्य

अकादमी पुरस्कार, सोवियत लैंड नेहरु पुरस्कार, पद्मभूषण, डालमिया पुरस्कार, देव पुरस्कार, द्विवेदी पदक आदि।

उनकी रचनाओं की सूची इस प्रकार है -

काव्य-कृतियाँ

वीणा (1927), ग्रन्थि (1920ध1929), पल्लव (1926), गुंजन (1932), युगान्त (1936), युगपथ (1949), युगवाणी (1939), ग्राम्या (1940), स्वर्णकिरण (1947), स्वर्णधूलि (1947), मधुज्वाल (1947), उत्तरा (1949), रजत-शिखर (1952), शिल्पी (1952), सौवर्ण (1956), अतिमा (1955), किरण-वीणा (1967), वाणी (1958), कला और बूढ़ा चाँद (1959), पौ फटने से पहिले (1967), पतझर (एक भाव-क्रान्ति - 1967), गीतहंस (1969), लोकायतन (1965) शंखध्वनि (1971), शशि की तरी (1971), समाधिता (1973), आस्था (1973), सत्यकाम (1975), गीत-अगीत (1977), संक्रांति (1977)

नाट्य-कृतियाँ

ज्योत्स्ना (1934), परी (जनवरी, 1925), जिन्दगी का चौराहा (1939), अस्पृश्या (1937), स्रष्टा (1938), करमपुर की रानी (1949), चौराहा (1948), शकुन्तला (1948), युग-पुरुष (1948), छाया (1948)

कहानी-संग्रह : पाँच कहानियाँ (1936)

उपन्यास :हार (1917)

निबन्ध : छायावाद : पुनर्मूल्यांकन (1965), शिल्प और दर्शन (1961), कला और संस्कृति (1965), साठ वर्ष - एक रेखांकन (1969)

16.2 चयनित कविताओं का पाठ और विश्लेषण

एक

पल्लव

अरे, ये पल्लव बाल ।
सजा सुमनों के सौरभ हार
गूँथते वे उपहार
अभी तो हैं ये नवल प्रवाल,
नहीं छूटी तरु डाल
विश्व पर विस्मित चितवन डाल,
हिलाते अधर प्रवाल।
न पत्रों का मर्मर संगीत,
न पुष्पों का रस, राग, पराग
एक अस्फुट, अस्पष्ट, अगीत,
सुप्ति की ये स्वनिल मुसकान
सरल शिशुओं के शुचि अनुराग,
वन्य विहगों के गान।
हृदय के प्रणय कुंज में लीन
मूक कोकिल का मादक गान,
बहा जब तन मन बन्धन हीन
मधुरता से अपनी अनजान
खिल उठी रोओं-सी तत्काल

पल्लवों की यह पुलकित डाल।
प्रथम मधु के फूलों का बाण
दुरा उर में, कर मृदु आघात,
रुधिर से फूट पड़ी रुचिमान
पल्लवों की यह सजल प्रभात,
शिराओं में उर की अज्ञात
नव्य जग जीवन कर गतिवान।
दिवस का इनमें रजत प्रसार
उषा का स्वर्ण सुहाग,
निशा का तुहिन अश्रु शृंगार,
साँझ का निःस्वन राग,
नवोढ़ा की लज्जा सुकुमार,
तरुणतम सुन्दरता की आग।
कल्पना के ये विह्वल बाल,
आँख के अश्रु, हृदय के हास,
वेदना के प्रदीप की ज्वाल,
प्रणय के ये मधुमास
सुछवि के छाया वन की साँस
भर गयी इनमें हाव, हुलास।
आज पल्लवित हुई है डाल,
झुकेगा कल गुंजित मधुमास।
मुग्ध होंगे मधु से मधु बाल,
सुरभि से अस्थिर मरुताकाश।

(नवम्बर, 1924, पल्लव)

कठिन शब्द

पल्लव बाल - किशोर उम्र के पल्लव, नये पत्ते नवल प्रवाल - नया मूँगा, नया पत्ता विस्मित चितवन - आश्चर्य से चकित निगाहें अधर प्रवाल - मूँगे की तरह लाल पल्लव-रूपी होंठ पत्रों - पत्तों मर्मर संगीत - धीमा और कोमल संगीत राग - रंग अस्फुट - जो पूरी तरह न खुला हो अगीत - एक ऐसा गीत जो परम्परागत ढंग का न हो सुप्ति - नींद स्वप्निल मुसकान - सपने देखते हुए चेहरे पर आई मुस्कुराहट शुचि अनुराग - मासूम प्रेम वन्य विहगों - वन के पक्षी प्रणय - प्रेम कुंज - वनस्पतियों से घिरी हुई सुंदर जगह प्रथम मधु - फूलों में आया हुआ नया पराग दुरा उर में - हृदय में छिपा कर रुधिर - रक्त रुचिमान - शोभायमान, जो सुंदर लग रहा हो सजल प्रभात - सरस लगती हुई सुबह रजत प्रसार - दिन का प्रकाशित रूप ऐसे फैला है मानो चाँदी की चमक फैली हो स्वर्ण सुहाग - सुनहला सौन्दर्य तुहिन अश्रु शृंगार - ओस-रूपी आँसुओं से सुंदर लगती रात निःस्वन राग - शाम की खामोश रागिनियाँ नवोढ़ा - नव विवाहिता विह्वल - व्याकुल बाल - किशोर उम्र हृदय के हास - हृदय का हुलास प्रदीप - दीपक मधुमास - वसंत ऋतु सुछवि के छाया वन - सुंदरता की छाया से निर्मित वन हाव - शृंगारिक संकेत, पुरुष को आकृष्ट करने के लिए स्त्री के द्वारा किया जानेवाला शृंगारिक संकेत हुलास - खुशी और उत्साह मधु बाल - किशोर उम्र के भौंरे अस्थिर मरुताकाश - आकाश तक फैली हवा का बेचौन हो जाना

सन्दर्भ और प्रसंग

सुमित्रानंदन पंत ने 'पल्लव' शीर्षक कविता की रचना नवम्बर, 1924 में की थी। यह कविता 'पल्लव' (1926) काव्य-संग्रह में संगृहीत हुई। तुलनात्मक रूप से देखा जाए तो पंत ने, दूसरे छायावादी कवियों की तुलना में, एक परिपक्व छायावादी काव्य-भाषा पहले प्राप्त कर ली थी। इस काव्य-भाषा को समझने में पाठक और आलोचक कुछ कठिनाई महसूस कर रहे थे। इसकी बनावट नए ढंग की थी। इनमें व्यक्त भाव भी अलग ढंग के थे। पुरानी दृष्टि से ये कविताएँ न तो ठीक से समझ में आती थीं और न ही इनका मूल्यांकन सम्भव था।

व्याख्या

सुमित्रानंदन पंत ने 'पल्लव' शीर्षक कविता में नए पत्तों के माध्यम से कुछ बातें कहने की कोशिश की है। नए पत्ते अपनी आरम्भिक अवस्था में अत्यंत कोमल और आकर्षक होते

हैं। उनमें आगे की तमाम सम्भावनाएँ भरी होती हैं। इस कविता में एक सम्भावनाशील व्यक्तित्व के रूप में 'पल्लव' को देखा गया है। पंत कहते हैं कि ये पल्लव अभी किशोर-उम्र में हैं। मानो वे कहना चाहते हैं कि छायावादी कविताएँ अभी किशोर-उम्र में हैं। इस रूपक के अनुसार इस कविता को पढ़ने पर हम एक अलग ढंग के महत्त्वपूर्ण विश्लेषण तक पहुँचते हैं।

पंत कहते हैं कि ये पल्लव (छायावादी कविताएँ) अभी कम उम्र के हैं। वे फूलों से भरते जा रहे हैं। उनसे निकलने वाली सुगंध से मानो वे हार बनाते जा रहे हैं। इस तरह पल्लवों और पुष्पों से बना सुगन्धित उपहार हमारे सामने आ रहा है। ये पल्लव अभी नए प्रवाल की तरह दिखाई पड़ रहे हैं। इनका रंग-रूप समुद्री मूँगे से मिलता-जुलता है। ये अभी इतने बड़े भी नहीं हुए हैं कि पेड़ की डाल पर स्वतंत्र रूप से लहरा सकें। इनकी डंठल अभी पूरी तरह बनी नहीं है। इन्हें ध्यान से देखिए तो मालूम होगा कि ये संसार को चकित निगाहों से देख रहे हैं, जैसे कोई बच्चा पूरी आँखें खोलकर इधर-उधर देखता हुआ सुंदर मालूम पड़ता है। इन पल्लवों को प्रवाल से बने होंठों की तरह भी महसूस किया जा सकता है। ये (छायावादी कविताएँ) अभी इतने परिपक्व नहीं हो पाए हैं कि इनके सामूहिक दोलन से पत्तों का मधुर संगीत उत्पन्न हो सके। इनमें फूलों की तरह का रस, रंग और पराग नहीं है। इनमें किसी तरह का कोई गीत भी नहीं है। इसकी ध्वनि या अभिव्यक्ति के बारे में यही कहा जा सकता है कि वह पूरी तरह व्यक्त नहीं है। वह साफ-साफ सुनाई नहीं देती है। उसे गीत नहीं 'अगीत' कहना ज्यादा अच्छा होगा। पंत कहना चाहते हैं कि पल्लव में गीत न होकर भी गीत-जैसा बहुत कुछ है। इसे (छायावादी कविताओं को) समझने के लिए अलग ढंग की समझ की जरूरत है। ये पल्लव नींद में पैदा हुई स्वप्निल मुस्कान की तरह सुंदर मालूम पड़ते हैं। इन्हें हम सरल स्वभाव वाले बच्चों के निर्दोष प्रेम की तरह मान सकते हैं। ये पल्लव (छायावादी कविताएँ) वन के पक्षियों के मुक्त गान की तरह आकर्षक लगते हैं।

हृदय में बसे हुए प्रणय-कुंज की कल्पना की जाए, फिर उसमें कोयल के मादक गान के मौन स्वरूप की कल्पना की जाए - इन्हें मिलाकर जो भाव व्यक्त होगा उसे पल्लव की तरह निर्मित मेरी कविताओं के रूप में समझना चाहिए। पंत कहते हैं कि मेरी ये कविताएँ अपनी मधुरता से अनभिज्ञ हैं। उन्हें सचेत रूप से नहीं मालूम है कि वे कितनी मधुर हैं। उनका यह भोलापन ही उनकी विशेषता है। उनके तन और मन पर किसी प्रकार का बंधन नहीं है। ये पल्लव डालियों पर ऐसे खिलते हैं जैसे सिहरन से भरकर रोएँ सजग हो जाते हैं। पंत का आशय यह है कि मेरी ये कविताएँ मेरी पुलक से भरी हैं।

पहले प्रेम की मिठास की तरह जिन फूलों में पराग आए हों और उन फूलों से कामदेव ने अपने बाण बना लिए हों- उन बाणों की तरह लगते हैं ये पल्लव और उसी तरह की हैं ये मेरी कविताएँ। ये पल्लव मानो अपने हृदय में इन बाणों को छिपाए रखते हैं और धीमे-से आघात कर देते हैं। इन पल्लवों को देखकर कामदेव के इन विशिष्ट बाणों की याद हो आती है। ये पल्लव जब खिलते हैं तो ऐसा लगता है मानो रुधिर की लाली सुरुचिपूर्ण तरीके से किसी की छवि में फैल गयी हो। ये पल्लव प्रभात के सौन्दर्य को सजल-सरसता से भर देते हैं। मेरी इन कविताओं को भी इसी तरह के क्रम और विन्यास के साथ समझने की जरूरत है। पल्लव की तरह की मेरी ये कविताएँ, संसार और जीवन के नएपन को, मन की शिराओं में सहज ही भर देती हैं।

पल्लव की तरह की मेरी इन कविताओं में ढेर सारी विशेषताएँ हैं। इनमें दिन की विस्तृत चमक है, उषा का सुनहला सौन्दर्य है, आँसू-जैसे ओसकणों से सजी हुई रात है और शाम की खामोश रागिनियाँ हैं। इनमें नव-विवाहिता की सुकुमार लज्जा है और तरुणाई की बेबाक खूबसूरती भी है। मेरी ये कविताएँ कल्पना की व्याकुल किशोरावस्था हैं, इनमें आँखों के छलकते आँसू हैं, इनमें हृदय का हुलास है, इनमें गहरे दुःख से बने दीपक की ज्वाला है, ये कविताएँ प्रेम की वसंत ऋतु हैं।

पंत 'पल्लव' की कविताओं को, रूपक के माध्यम से परिभाषित कहते हुए, अगली पहचान बताते हैं कि सुंदरता की छाया से निर्मित वन में चलने वाली मंथर हवा की तरह हैं ये कविताएँ। इस मंथर हवा ने ही इनमें हाव-भाव और खुशी-उत्साह का संचार किया है। आज मेरी कविता की डाली केवल पल्लवित हुई है, कल इस डाली के आस-पास भौंरों की गुंजार से भरा हुआ वसंत खुद झुक कर चला आएगा। तब इन कविताओं के पास मधु और पराग की इतनी बहुतायतता होगी कि किशोर उम्र के भौंरे इन पर मुग्ध हो उठेंगे। इनसे इतनी सुगंध फैलेगी कि धरती से लेकर आकाश तक व्याप्त वायु बेचौन हो उठेगी।

पंत ने इस कविता में पल्लव और अपनी कविता की विशेषताओं को इस तरीके से घुला मिला दिया है कि उन्हें उपमा-रूपक-रूपकातिशयोक्ति-श्लेष आदि अलंकारों की तकनीक से अलग-अलग कर नहीं दिखाया जा सकता है। इनकी पहचान तो स्पष्ट है, परंतु इनका उपयोग सादृश्यमूलकता के परंपरागत अर्थ और रूप में नहीं हुआ है।

काव्य सौष्ठव / विशेष

- इस कविता में पल्लव और कविता के रूपक को अद्‌भुत ढंग से निभाया गया है।
- छायावादी कविता को समझने के लिए जिस तरह के सौन्दर्य-बोध की जरूरत थी, उसे समझाने की कोशिश इस कविता में दिखाई पड़ती है।
- छायावादी कवि अपनी कविताओं की बोधगम्यता को लेकर सजग चिंतित थे, जिसका प्रकटीकरण इस कविता में हुआ है।
- 12 और 16 मात्राओं की पंक्तियों से इस कविता का निर्माण हुआ है, मगर किसी नियमित क्रम में ये पंक्तियाँ नहीं हैं।

दो

प्रथम रश्मि का आना रंगिणि।
तूने कैसे पहचाना?
कहाँ, कहाँ हे बाल विहंगिनि ।
पाया तूने यह गाना ?
सोयी थी तू स्वप्न नीड़ में
पंखों के सुख में छिपकर,
ऊँघ रहे थे, घूम द्वार पर,
प्रहरी से जुगनू नाना,
शशि किरणों से उतर-उतरकर
भू पर कामरूप नभचर
चूम नवल कलियों का मृदु मुख
सिखा रहे थे मुसकाना,
स्नेह हीन तारों के दीपक,
श्वास शून्य थे तरु के पात,
विचर रहे थे स्वप्न अवनि में,
तम ने था मण्डप ताना,
कूक उठी सहसा तरुवासिनि।
गा तू स्वागत का गाना,
किसने तुझको अंतर्यामिनि।
बतलाया उसका आना?
निकल सृष्टि के अन्ध गर्भ से
छाया तन बहु छाया हीन,

चक्र रच रहे थे खल निशिचर
चला कुहुक, टोना माना,
छिपा रही थी मुख शशिबाला
निशि के श्रम से हो श्रीहीन,
कमल क्रोड़ में बन्दी था अलि
कोक शोक से दीवाना,
मूर्छित थीं इन्द्रियाँ, स्तब्ध जग,
जड़ चेतन सब एकाकार,
शून्य विश्व के उर में केवल
साँसों का आना-जाना,
तूने ही पहले बहु दर्शिनि।
गया जागृति का गाना,
श्री सुख सौरभ का नभचारिणि।
गूँथ दिया ताना-बना।
निराकार तम मानो सहसा
ज्योति पुंज में हो साकार,
बदल गया द्रुत जगत जाल में
धर कर नाम रूप नाना,
सिहर उठे पुलकित हो द्रुम दल
सुप्त समीरण हुआ अधीर,
झलका हास कुसुम अधरों पर,
हिल मोती का-सा दाना,
खुले पलक, फैली सुवर्ण छवि,
खिली सुरभि, डोले मधु बाल,
स्पन्दन कम्पन औ' नव जीवन
सीखा जग ने अपनाना,
प्रथम रश्मि का आना, रंगिणि,
तूने कैसे पहचाना?
कहाँ, कहाँ, हे बाल विहंगिनि।
पाया यह स्वर्गिक गाना?

(1919, वीणा)

सन्दर्भ और प्रसंग

सुमित्रानंदन पंत की 'प्रथम रश्मि' कविता 1919 में लिखी गयी थी और 'वीणा' (1927) में संगृहीत हुई थी। यह कविता छायावाद की शुरुआती कविताओं में प्रमुख है। इसमें छायावादी प्रवृत्तियों को प्रमुखता से व्यक्त होने का अवसर प्राप्त हुआ था। पंत ने प्रारम्भिक दौर में ही जिस तरह की परिपक्व छायावादी काव्य-भाषा प्राप्त कर ली थी, उसका सुन्दर उदाहरण है यह कविता। पन्त ने इस कविता में चिड़िया को सम्बोधित करके कुछ बातें कही हैं। यह चिड़िया किशोर उम्र की है। वे उसे 'बाल विहंगिनी' कहते हैं, जिसका अर्थ है 'बालिका चिड़िया'। प्रकृति में मनुष्य को देखने का यह एक सुंदर उदाहरण है। वे उस चिड़िया से कोमलतापूर्वक बात करते हैं। इस एक-तरफा संवाद में रोमानियत की अंतर्धारा बहती हुई जान पड़ती है। नामवर सिंह ने अपनी पुस्तक 'छायावाद' में एक अध्याय का नाम ही रखा है - 'प्रथम रश्मि'। इस अध्याय में उन्होंने छायावाद के प्रारंभ पर विचार किया है। जाहिर-सी बात है कि अध्याय का नाम काव्यात्मक होने के बावजूद इस संकेत को लिए हुए है कि छायावाद के प्रारंभ को 'प्रथम रश्मि' कविता के माध्यम से भी चिह्नित करने की जरूरत है। छायावाद अपने चारों कवियों में सबसे ज्यादा पन्त के द्वारा ही 1918 से प्रारंभ होने के प्रमाण जुटा पाता है। 1918 में निराला और महादेवी की कविताएँ नहीं

मिलती हैं। उस समय महादेवी वर्मा मात्र 11 वर्ष की थीं। निराला यद्यपि पंत से दो-चार वर्ष बड़े थे, मगर उनकी पहली कविता 1920 की मिलती है। जयशंकर प्रसाद यद्यपि वरिष्ठ थे और काफी कुछ लिख चुके थे, मगर छायावादी कविताओं के मामले में उनकी गति और क्षमता बाद में प्रकट हुई।

कठिन शब्द

प्रथम रश्मि - सुबह की पहली किरण रंगिणि - रंगीन पक्षियों को सम्बोधन बाल विहंगिनि - किशोर उम्र की चिड़िया को सम्बोधन स्वप्न नीड़ - घोंसले मानो चिड़िया के सपनों को जगह देते हैं शशि किरणों - चाँदनी कामरूप - अपनी इच्छा से रूप धारण करने वाले नभचर - आकाश में चलनेवाले बादल स्नेह हीन - (दीपक में) तेल की कमी हो जाना तारों के दीपक - दीपक की तरह दिखनेवाले तारे श्वास शून्य - हवा का रुक जाना अवनि - धरती मण्डप - शामियाना तरुवासिनि - पेड़ों पर रहनेवाली चिड़िया को सम्बोधन अंतर्यामिनि - भूत-भविष्य और गुप्त बातों को जान लेनेवाली चिड़िया को सम्बोधन सृष्टि के अंध गर्भ से - रात में प्रकृति की गोद से छाया तन - जिनकी केवल छाया हो, भूत-प्रेत छाया हीन - जिनकी छाया नहीं बनती हो, भूत-प्रेत खल - दुष्ट निशिचर - रात में सक्रिय हो जानेवाले, भूत-प्रेत कुहुक - इन्द्रजाल, जादू का जाल फैलाना टोना माना - जादू करना शशिबाला - चाँद मानो एक स्त्री की तरह है निशि के श्रम - रति-श्रम श्रीहीन - थका होना कमल क्रोड़ - कमल की गोद अलि - भौंरा कोक - चकवा स्तब्ध जग - रात में सोया हुआ संसार स्तब्ध था एकाकार - एक आकार में दिखाई पड़ना शून्य विश्व - रात में सोया हुआ संसार मानो शून्य की तरह लग रहा था बहु दर्शिनि - ढेर सारी चीजों को देख लेनेवाली चिड़िया को सम्बोधन श्री - शोभा, सौन्दर्य नभचारिणि - आकाश में विचरण करनेवाली चिड़िया को सम्बोधन ताना-बाना - कपड़े की बुनाई में चौड़ाई और लम्बाई में धागे का लगना, माहौल बनाना निराकार तम - अन्धकार ने मानो सबके आकार को समाप्त कर दिया था, अँधेरा आकार-विहीन होता है द्रुत - शीघ्र द्रुम दल - पौधों-वृक्षों की पत्तियाँ सुप्त समीरण - ठहरी हुई हवा सुवर्ण छवि - सुबह की सुनहली आभा मधु बाल - किशोर उम्र के भौंरे, अनाज की मीठी बालियाँ स्पन्दन - गति, हलचल स्वर्गिक गाना - स्वर्ग की तरह के सुंदर गीत

व्याख्या

बालिका चिड़िया को सम्बोधित करते हुए पंत कह रहे हैं कि हे रंगोंवाली चिड़िया। तुम्हें कैसे पता चलता है कि सुबह होनेवाली है? सुबह की पहली किरण (प्रथम रश्मि) के आने से पहले ही तुम उसके आने का संकेत कर देती हो। तुम कैसे पहचान जाती हो कि 'प्रथम रश्मि' आनेवाली है? पंत की इस प्रकार की जिज्ञासा को 'बाल सुलभ जिज्ञासा' कहा गया है। इस कविता में वे कई बार इस तरह की जिज्ञासा प्रकट करते हैं। पंत आगे पूछते हैं कि हे बाल विहंगिनी (बालिका चिड़िया)। तुमने इतना सुंदर गायन कहाँ-कहाँ से प्राप्त किया है?

भोर से पहले तुम अपने घोंसले में सोयी थी और सुंदर सपने देख रही थी। सोते समय तुमने अपने शरीर को पंखों से ढँक रखा था। इस तरह तुम सुखपूर्वक सोती हुई सपनों में डूबी थी। तुम्हारे घोंसले के आसपास जुगनू घूम रहे थे। ऐसा लग रहा था मानो वे पहरेदार हों और तुम्हारे दरवाजे की रक्षा कर रहे हों। हालाँकि सुबह होने तक वे जुगनू मानो थक गए थे और ऊँघते हुए घूम-घूम कर पहरेदारी कर रहे थे।

पंत भोर के पहले के कई दृश्य इस कविता में उपस्थित कर रहे हैं। अगला दृश्य यह है कि चाँद की किरणों के सहारे बादल धरती पर उतर रहे थे। बादल तो कामरूप (इच्छा के अनुसार रूप धारण करना) होते हैं और आकाश में चलते हैं। मगर चाँदनी की डोर पकड़कर और ओस की बूँदें बनकर वे धरती पर उतर आए हैं। उन बादलों ने नवल कलियों के कोमल मुख को इतने प्रेम से चूमा है कि कलियों ने खिलते हुए मुस्कुराने की कला सीख ली है।

एक और दृश्य देखिए। आकाश के तारे रात में दीपकों की तरह चमक रहे थे। भोर होने से पहले ऐसा लगा मानो उन दीपकों में तेल समाप्त हो गया हो और वे बुझते-बुझते-से जल रहे हों। धरती पर हवा लगभग रुक गयी थी। पेड़ के पत्ते ऐसे स्थिर हो गए थे मानो

वे साँस भी नहीं ले रहे हों। धरती के सभी प्राणी सोये थे। चारों तरफ अँधेरा छाया था और केवल सपनों का आवागमन मालूम पड़ रहा था। किसी को आभास नहीं था कि अब रात समाप्त हो गयी है और 'प्रथम रश्मि' यहाँ पहुँचने के लिए चल पड़ी है।

ऐसे समय में तुम अचानक कूक उठी। तुम तो पेड़ों पर रहती हो। तुम्हें कैसे पता चल जाता है कि 'प्रथम रश्मि' आने ही वाली है। इन पंक्तियों में पन्त 'तरुवासिनी' के रूप में कोयल को याद कर रहे हैं क्योंकि यहाँ 'कूक' शब्द का प्रयोग हुआ है। हे तरुवासिनी। तुम सहसा स्वागत के मीठे गीत के तराने उठाने लगी। तुम तो अंतर्यामिनी मालूम पड़ती हो। लगता है जैसे तुम्हें छिपी हुई बातों की भी जानकारी रहती है। पंत इस अंश में दो तरह की बातें कह रहे हैं - पहली यह कि तुम अंतर्यामिनी हो और दूसरी यह कि बता दो कि तुम्हें 'प्रथम रश्मि' के आने के बारे में किसने बतलाया?

यहाँ इस कविता का पहला हिस्सा पूरा होता है।

रात्रि के अंतिम प्रहर के कुछ और दृश्य अंकित करते हुए पन्त लिखते हैं कि सृष्टि गहरे अँधेरे में डूबी हुई है। उस रहस्यमय अँधेरे के भीतर से मानो भूत-प्रेत-बेताल जैसी शक्तियाँ बाहर निकल आयी थीं। पंत यहाँ लोकमान्यताओं का उपयोग कर रहे हैं, जिनके अनुसार रात में पैशाचिक शक्तियाँ सक्रिय हो जाती हैं। रात में छाया के रूप में या छायाहीन शरीर के रूप में निकलकर ये दुष्ट निशाचर जादू-टोना और मायावी कर्म कर रहे थे।

चाँद ढल रहा था। ऐसा लग रहा था मानो चाँद एक स्त्री की तरह था। उसके चेहरे पर अपने प्रिय से मिलन और रति-कर्म के निशान मौजूद थे। इस बात को पंत ने अपनी शैली में लिखा है कि रात के रति-श्रम से थककर शशिबाला का चेहरा कांतिहीन हो चुका है। वह अपना चेहरा छिपाते हुए चली जा रही है। वह मानो डर रही है कि उसके चेहरे पर मौजूद प्रिय-मिलन के चिह्नों को कोई देख न ले। इससे उसका उपहास किया जा सकता है। यह तो आकाश में हो रहा था। धरती पर जलाशयों में कमल संकुचित थे। कमल की बंद पंखुड़ियों के भीतर भौंरा कैद था। अब तो सुबह होने पर ही कमल की पंखुड़ियाँ खुलेंगी और भौंरा निकल पाएगा। दूसरी तरह चकवा-चकई एक-दूसरे को देखने के लिए चीत्कार कर रहे हैं। कवि-समय है कि चकवा-चकई आस-पास होकर भी रात में एक-दूसरे को देख नहीं पाते हैं। सुबह होने पर उनकी मुलाकात हो पाती है।

पूरी धरती सोयी हुई थी। मानो सभी इन्द्रियाँ मूर्च्छित हो गयी हों। संसार स्तब्ध लग रहा था। रात के अँधेरे और सन्नाटे में जड़-चेतन एक-जैसे लग रहे थे, क्योंकि किसी में गति और ध्वनि नहीं थी। सूनेपन के कारण विश्व एक शून्य की तरह लग रहा था। ऐसा मालूम पड़ता था कि संसार के हृदय में केवल साँसों का आना-जाना ही हो पा रहा है।

इन परिस्थितियों में हे बाल विहंगिनी। तुमने जागृति का गाना गाया। तुम 'बहु दर्शिनी' हो। तुम ढेर सारी चीजों को देख लेने की क्षमता रखती हो। तुम्हारे गान से श्री (शोभा), सुख और सौरभ का ताना-बाना पूरे माहौल में बन गया।

यहाँ इस कविता का दूसरा हिस्सा पूरा होता है।

अंतिम चरण में सुबह का चित्रण है।

अँधेरा तो आकार-विहीन होता है। सुबह हुई और प्रकाश फैलने लगा। ज्योति-पुंज में मानो निराकार अँधेरा साकार होकर दिखाई पड़ने लगा। जैसे-जैसे रोशनी फैलती गयी, संसार की अनेकानेक चीजें अपने रूप और नाम के साथ सामने प्रकट होने लगीं। अब तक तो न रूप दिख रहा था और न उन्हें नाम से जानने की गुंजाइश थी। सब कुछ अँधेरे में डूबा था और केवल एक आकार दिख रहा था जिसे 'अँधेरा' ही कहा जा सकता है।

सुबह होते ही पौधों में गतिशीलता पैदा हुई। ऐसा लगा मानो वे पुलक और सिहरन से भर

गए हों। मानो सोयी हुई हवा चल पड़ी हो। फूलों की पंखुड़ियों पर ओस की बूँदें मोती के दानों की तरह ढुलक पडीं। यूँ लगा कि फूलों के होंठों पर हँसी झलक पड़ी हो।

बंद पलकें खुल गयीं, स्वर्ण छवि चारों तरफ फैल गयी, सुगंधित वायु प्रवाहित होने लगी और तरुण उम्र के भौंरे डोलते हुए घूमने लगे। स्पंदन, कम्पन और जीवन की नूतनता को संसार ने मानो अपनाना सीख लिया हो।

तुम रंगों से परिपूर्ण हो। हे बाल विहंगिनी। तुमने 'प्रथम रश्मि' का आना कैसे पहचान लिया। तुमने स्वर्ग की तरह के सुंदर गान को कहाँ-कहाँ से प्राप्त किया?

काव्य सौष्ठव / विशेष

- यह छायावाद की शुरुआती कविताओं में प्रमुख है।
- इसके प्रश्नों में बाल-सुलभ जिज्ञासा है।
- यह कविता 'प्रकृति के सुकुमार कवि' पंत की पहचान बन गयी है।
- 16 और 14 मात्राओं की पंक्तियों के क्रम में पूरी कविता लिखी गयी है।
- प्रकृति में मनुष्य को देखने की छायावादी प्रवृत्ति का यह सुन्दर उदाहरण है।
- यह अपने ढंग से जागरण की कविता है।

तीन

मौन निमंत्रण

स्तब्ध ज्योत्स्ना में जब संसार
चकित रहता शिशु-सा नादान,
विश्व के पलकों पर सुकुमार
विचरते हैं जब स्वप्न अजान,

न जाने, नक्षत्रों से कौन
निमंत्रण देता मुझको मौन ।

सघन मेघों का भीमाकाश
गरजता है जब तमसाकार,
दीर्घ भरता समीर निःश्वास,
प्रखर झरती जब पावस धार,
न जाने, तपक तड़ित में कौन
मुझे इंगित करता तब मौन।
देख वसुधा का यौवन भार
गूँज उठता है जब मधुमास,
विधुर उर के-से मृदु उद्‌गार
कुसुम जब खुल पड़ते सोच्छ्‌वास,
न जाने, सौरभ के मिस कौन
सँदेशा मुझे भेजता मौन ।
शुब्ध जल शिखरों को जब वात
सिन्धु में मथ कर फेनाकार,
बुलबुलों का व्याकुल संसार
बना बिथुरा देती देती अज्ञात,

उठा तब लहरों से कर कौन
न जाने, मुझे बुलाता मौन।
स्वर्ण, सुख, श्री, सौरभ में भोर
विश्व को देती है जब बोर,
विहग कुल की कल कंठ हिलोर
मिला देती भू नभ के छोर,
न जाने, अलस पलक दल कौन
खोल देता तब मेरे मौन।
तुमुल तम में जब एकाकार
ऊँघता एक साथ संसार,
भीरु झींगुर कुल की झनकार
कँपा देती तन्द्रा के तार,
न जाने, खद्योतों से कौन
मुझे पथ दिखलाता तब मौन।
कनक छाया में, जब कि सकाल
खोलती कलिका उर के द्वार,
सुरभि पीड़ित मधुपों के बाल
तड़प, बन जाते हैं गुंजार,
न जाने, ढुलक ओस में कौन
खींच लेता मेरे दृग मौन।
बिछा कार्यों का गुरुतर भार
दिवस को दे सुवर्ण अवसान,
शून्य शय्या में, श्रमित अपार,
जुड़ाती जब मैं आकुल प्राण,
न जाने मुझे स्वप्न में कौन
फिराता छाया जग में मौन।
न जाने कौन, अये द्युतिमान।
जान मुझको अबोध, अज्ञान,
सुझाते हो तुम पथ अनजान,
फूँक देते छिद्रों में गान,
अहे सुख-दुःख के सहचर मौन।
नहीं कह सकती तुम हो कौन।

(नवम्बर, 1923, पल्लव)

सन्दर्भ और प्रसंग

'मौन निमंत्रण' सुमित्रानंदन पंत की एक प्रसिद्ध कविता है। इसका रचना-काल नवम्बर, 1923 है। आगे चलकर यह कविता 'पल्लव' (1926) में संगृहीत हुई। इस कविता में छायावाद की कई प्राथमिक विशेषताएँ मौजूद हैं। प्रकृति में मनुष्य को देखने की प्रवृत्ति का सुंदर उदाहरण है यह कविता। इसमें 'बाल सुलभ जिज्ञासा' को अपने सुंदर रूप में देखा जा सकता है। पन्त को 'प्रकृति का सुकुमार कवि' कहा जाता है। उनकी इस विशेषता को यह कविता अच्छी तरह दर्शाती है। पंत ने कौतूहल भाव से यह बताया है कि प्रकृति के विभिन्न उपादानों से उन्हें आमंत्रण के संकेत मिलते हैं। मतलब यह कि प्रकृति संवेदनशील मनुष्य को अपनी तरफ आकर्षित करती है। आकर्षण के कई पक्षों को इस कविता में जिज्ञासा और कौतूहल के साथ प्रस्तुत किया गया है।

कठिन शब्द

1. स्तब्ध ज्योत्स्ना - स्थिर रूप से बरसती हुई चाँदनी 2. विश्व के पलकों पर - रात में मानो पूरा संसार सोया है और उसकी पलकों पर सपने विचरण कर रहे हैं 3. स्वप्न अजान - अनजाने सपने 4. नक्षत्रों - सितारों 5.सघन मेघों - गहरे बादल 6. भीमाकाश - विशाल आसमान 7.तमसाकार - तमसआकार, आकार के रूप में केवल अँधेरे का दिखना 8.समीर - हवा 9.निःश्वास - गहरी साँस 10. पावस धार- वर्षा ऋतु की बारिश 11. तपक तड़ित - चंचल आकाशीय बिजली 12. इंगित - संकेत, इशारा 13. वसुधा का यौवन भार - वसंत ऋतु में धरती की शोभा यौवन के सम्भार की तरह लगती है 14. मधुमास - वसंत का महीना 15. विधुर उर - वियोगी व्यक्ति का मन 16. उद्‌गार - अकृत्रिम अभिव्यक्ति 17. सोच्छ्‌वास - आह के साथ साँस का निकलना 18. सौरभ के मिस - सुगंध के बहाने 19. क्षुब्ध जल शिखरों - बेचैन लहरें 20. वात - हवा 21. फेनाकार - फेन के आकार का बना देना 22. बिथुरा - बिखेर देना 23. स्वर्ण - सुबह का सुनहला रंग 24. श्री - शोभा, सौन्दर्य 25. बोर - डुबो देना सराबोर कर देना 26. विहग कुल - पक्षियों का झुण्ड 27. कल कंठ हिलोर - सुंदर कंठ से उठाई गई मधुर तान 28. अलस पलक - अलसायी हुई पलकें 29. तुमुल तम - घना अँधेरा 30. एकाकार - एक आकार, एक आकार का दिखना 31. भीरु झींगुर कुल - डरपोक झींगुरों का झुण्ड, इन कीड़ों की आवाज तो तेज होती है मगर ये दिखाई नहीं पड़ते हैं 32.तन्द्रा के तार - नींद से पहले की खुमारी का क्रम 33. खद्योतों - जुगनुओं 34. कनक छाया - सुबह का सुनहला माहौल 35. सकाल - सुंदर काल, सुबह 36. सुरभि पीड़ित मधुपों के बाल - सुगंध से बेचौन किशोर उम्र के भौंरे 37.गुरुतर भार - कठिन और बड़ी जिम्मेदारियाँ 38.सुवर्ण अवसान - शाम के सुनहले माहौल में दिन की समाप्ति 39. शून्य शय्या - एकांत बिस्तर 40. श्रमित अपार - अत्यधिक थक जाना 41. छाया जग - सपनों का अवास्तविक संसार 42. द्युतिमान - प्रकाशमान 43. अज्ञात पथ-प्रदर्शक 44. छिद्रों में गान - कानों में गीतों की अनुगूँज भर देना 45. सुख-दुःख के सहचर - सुख और दुःख में साथ देनेवाला वह अज्ञात

व्याख्या

सुमित्रानंदन पन्त ने 'मौन निमंत्रण' कविता की शुरुआत रात की प्रकृति से की है। वे लिखते हैं कि रात में चाँदनी फैली हुई थी। चाँदनी में किसी तरह की चंचलता नहीं थी, वह स्थिर थी। उस चाँदनी में डूबा हुआ संसार नादान शिशु की तरह चकित भाव से मानो सोया हुआ था। सोये हुए संसार की पलकों पर मानो अनजान सपनों का विचरण हो रहा था। ऐसे समय में मैंने देखा कि आकाश में फैले हुए सितारों के बीच कोई है जो मुझे चुपचाप इशारों से निमंत्रण दे रहा है। वह कौन है? मैं नहीं जानता।

पन्त ने प्रकृति के कई दृश्यों को रखते हुए मौन निमंत्रण के भाव को व्यक्त किया है।

जब विशाल आकाश सघन मेघों से भर जाता है और गुरजता है, तब लगता है कि उसने तमस (अँधेरा) का रूप धारण करके गर्जना की है। बादलों के छा जाने के बाद हवा की गति ऐसी लगती है मानो वह लम्बी साँसें ले रही हो। और उसके बाद बरसात की प्रखर वृष्टि होने लगती है। इन सबके बीच जब चंचल बिजली चमकती है, तो मुझे लगता है कि इस बिजली में कोई है जो मुझे चुपचाप मेरी तरफ इशारा कर रहा है।

वसंत ऋतु में धरती अपनी यौवनावस्था में होती है। वह यौवनोचित सौन्दर्य-भार से युक्त होती है। उसकी सुंदरता को देखकर वसंत (मधुमास) के भौंरे अपनी गुनगुनाहट से अनुगूँज भर देते हैं। इस ऋतु में फूलों का खिलना ऐसे लगता है मानो किसी वियोगी के हृदय से कोमल उद्‌गार उच्छ्‌वास के साथ निकल रहे हों। खिले हुए इन फूलों के बीच कोई है जो सुगंध के बहाने मेरे पास अपने संदेश चुपचाप भेज देता है।

अगला दृश्य समुद्र का है। हवा समुद्र की ऊँची लहरों को मथकर फेन-फेन कर देती है। ऐसा लगता है मानो समुद्र फेन के आकार का हो गया है। फेन में बुलबुलों का संसार निर्मित हो जाता है। जब बुलबुले बुदबुद होकर बनते-बिगड़ते हैं तब वे व्याकुल मालूम पड़ते हैं। बुलबुलों से बने हुए इस व्याकुल संसार को बनानेवाली हवा पुनः इसे बिखेर भी देती है। वह ऐसा क्यों करती है? यह सब अज्ञात सा लगता है। इन दृश्यों के बीच समुद्र की लहरों से किसी का हाथ इशारे करता हुआ मुझे मालूम पड़ता है न जाने वह कौन है जो लहरों में छुपकर, हाथ के इशारे से, मुझे अपनी तरफ बुलाता हुआ मालूम पड़ता है।

अगला दृश्य भोर का है। भोर अपने प्रभाव में विश्व को ले लेती है। भोर के प्रभाव को व्यक्त करते हुए पंत लिखते हैं कि वह सुनहला प्रकाश, सुखद वातावरण, शोभाशाली छवियों और असंख्य सुगन्धों में विश्व को डुबो देती है। भोर होते ही झुण्ड के झुण्ड पक्षी अपने कोमल कंठ-स्वरों से धरती-आकाश के ओर-छोर को एक कर देते हैं। ऐसे समय में, मेरी अलसायी हुई पलकों को, पंखुड़ियों की तरह, कौन आकर चुपचाप खोल देता है।

घने अँधेरे में डूबा हुआ संसार अब तक एकाकार था और ऊँघ रहा था। डरपोक झींगुर छिपकर अपने समूह के साथ झंकार पैदा कर रहे थे। उनकी तेज आवाज से तन्द्रा के तार काँप जा रहे थे। उनकी आवाज से उनींदापन दूर हो जा रहा था। रात के अँधेरे में जुगनुओं के बीच कोई था जो मुझे चुपचाप अपनी जलती-बुझती चमक से चुपचाप रास्ता दिखा रहा था।

सुबह स्वर्णिम छाया में डूबी थी। सुबह-सुबह कलियाँ खिलने के क्रम में थीं, मानो वे अपने हृदय के द्वार खोल रही थीं। किशोर-उम्र के भौंरे कलियों की सुगंध से मानो बेचौन हो उठे थे। उनकी तड़प मानो गुंजार बनकर सुनायी पड़ रही थी। इसी बीच, ढुलकती हुई ओस की बूँदों में, कोई है जो अपने इशारे के कारण मेरी निगाहों को अपनी ओर चुपचाप खींच लेता है।

कविता के अंतिम हिस्से में पंत लिखते हैं कि दिन भर ढेर सारे गम्भीर कामों को सम्पन्न करते हुए एक स्वर्णिम समापन की तरह मैं संध्याकाल तक पहुँचता हूँ। फिर रात में सूने एकांत बिछावन पर थककर लेट जाता हूँ। कविता की इन अंतिम पंक्तियों पर पहुँचकर पता चलता है कि पंत ने यह कविता स्वयं को स्त्री-रूप में रखकर लिखी है कि मैं अपने आकुल-व्याकुल प्राणों को रात में विश्राम और तसल्ली प्रदान करती हूँ। तब न जाने कौन चुपचाप मुझे सपनों के लोक में घुमाने ले जाता है। वह लोक छाया से बना होता है और बहुत आकर्षक होता है। पंत उस अज्ञात को 'द्युतिमान' को कहते हैं अर्थात् वह प्रकाश-पुंज की तरह है। पंत उसे सम्बोधित करते हुए कहते हैं कि हे द्युतिमान। मैं तुम्हें नहीं जानती। तुम मुझे अबोध और अज्ञानी मानकर, मेरे जीवन के अनजान रास्तों को सुगम बनाते हो। तुम मेरे कानों में अपने सुंदर गान भर देते हो। तुम मेरे सुख और दुःख के साथी हो। मगर मैं नहीं जानती कि तुम हो कौन?

काव्य सौष्ठव / विशेष

- छायावाद के शुरुआती दौर की यह प्रौढ़ रचना है।
- प्रकृति के प्रति आत्मीय जिज्ञासा से यह कविता भरी-पूरी है।
- इस कविता में प्रकृति के मानवीकरण की प्रवृत्ति भरपूर है।
- इस कविता की प्रश्नाकुलता में सौन्दर्य भरा है।
- इसकी प्रत्येक पंक्ति में 16-16 मात्राएँ हैं।

बोध प्रश्न-1

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर संक्षेप में दें।

1. 'पल्लव' शीर्षक कविता में किस विषय पर विचार किया गया है ?

.....

.....

.....

.....

2. 'प्रथम रश्मि' कविता का क्या महत्त्व है?

.....

.....

.....

.....

3. 'प्रथम रश्मि' शीर्षक कविता में चिड़िया के लिए किन-किन संबोधनों का प्रयोग हुआ है?

.....

.....

.....

.....

4. 'मौन निमंत्रण' कविता में कवि को कहाँ-कहाँ से निमंत्रण मिलता है ?

.....

.....

.....

.....

5. प्रकृति और मनुष्य के रिश्ते को 'मौन निमंत्रण' कविता किस रूप में व्यक्त करती है?

.....

.....

.....

.....

6. नीचे प्रश्न के साथ कुछ विकल्प दिए जा रहे है। उत्तर के लिए सही विकल्प को चिन्हित कीजिए।

i. 'प्रथम रश्मि' शीर्षक कविता किस पुस्तक में है?

क) पल्लव ख) वीणा ग) गुंजन घ) ग्राम्या

ii. 'प्रथम रश्मि' किस प्रकार की कविता है?

क) छायावादी ख) प्रगतिवादी ग) प्रयोगवादी घ) रीतिवादी

iii. 'स्वप्न नीड़' में कौन-सा अलंकार है\

क) उपमा ख) रूपक ग) रूपकातिशयोक्ति घ) उत्प्रेक्षा

iv. 'नभचर' का क्या अर्थ है?

क) सुबह ख) क्षितिज ग) धरती घ) बादल

v. 'शशिबाला निशि के श्रम से' क्या हो गयी थी?

क) उज्ज्वल ख) मनमोहिनी ग) श्रीहीन घ) नभचारिणी

vi. 'पल्लव' काव्य-संग्रह का प्रकाशन कब हुआ था ?

क) 1925 ख) 1926 ग) 1936 घ) 1918

vii. 'पल्लव' शब्द का प्रयोग किसे प्रतीकित करने के लिए किया गया है ?

क) कोमलता ख) प्रकृति ग) आकाश घ) कविता

viii. 'मौन निमंत्रण' कविता का प्रथम प्रकाशन कब हुआ था?

क) 1923 ख) 1936 ग) 1918 घ) 1934

ix. 'मौन निमंत्रण' शीर्षक कविता किस पुस्तक में है

क) ग्रन्थि ख) गुंजन ग) वीणा घ) पल्लव

x. 'मौन निमंत्रण' कविता में कितनी मात्रा की पंक्तियों का उपयोग हुआ है?

क) 12 ख) 14 ग) 16 घ) 18

xi. सुमित्रानंदन पंत का जन्म कब हुआ था?

क) 1900 ख) 1895 ग) 1905 घ) 1907

xii. 'भीमाकाश' का अर्थ बताएँ ?

क) बहुत बड़ा ख) भयंकर ग) भीमसेन घ) विशाल आकाश

xiii. 'मौन निमंत्रण' कविता में किस कोटि की 'जिज्ञासा' प्रकट हुई है?

क) दार्शनिक ख) स्त्रियोचित ग) परिपक्व घ) बालसुलभ

xiv. 'प्रकृति का सुकुमार कवि' किसे कहा गया है?

क) जयशंकर प्रसाद ख) सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला ग) सुमित्रानंदन पंत
घ) महादेवी वर्मा

16.3 सारांश

- पंत ने छायावाद की शुरुआती कविताओं को पल्लव की तरह कोमल और सुंदर बताया है। पल्लव के रूपक का विस्तार करते हुए उन्होंने उस सौन्दर्य-बोध को रखने की कोशिश की है जिसके सहारे इन कविताओं को ठीक से समझा जा सके।
- कवि अपनी बाल-सुलभ जिज्ञासा को प्रकट करता हुआ चिड़िया से कई प्रश्न कर रहा है। उन प्रश्नों में जागरण के संकेत हैं।
- कवि ने प्रकृति के विभिन्न रूपों के प्रति अपने मानवीय आकर्षण को व्यक्त करने के लिए यह कविता रची है। प्रकृति और मनुष्य के अटूट सम्बन्ध को आत्मीय तरीके से पेश करती हुई यह कविता बताती है कि छायावाद का मानवीकरण केवल अलंकार नहीं है बल्कि एक तरह की जीवन-दृष्टि और विश्व-दृष्टि है।

16.4 उपयोगी पुस्तकें

1. छायावाद- नामवर सिंह, राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली।

2. सुमित्रानंदन पंत ग्रन्थावली (कुल सात खंड)- राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली।

3. छायावादी काव्य-कोश- कमलेश वर्मा, सुचिता वर्मा, द मार्जिनलाइज्ड प्रकाशन, मैंदान गढ़ी, दिल्ली ।

16.5 बोध प्रश्नों /अभ्यासों के उत्तर

बोध प्रश्न-1

1. पल्लव' शीर्षक कविता में पन्त ने इस बात पर विचार किया है कि उनकी छायावादी कविताओं को समझने के लिए नए सौन्दर्य-बोध और भाषा-बोध की जरूरत है। इस कविता में जो बातें कही गयी हैं वे अवान्तर से दूसरे छायावादी कवियों पर भी लागू होती हैं। पंत इस कविता में बताते हैं कि अभी ये कविताएँ पल्लव की तरह हैं। अभी इनमें विकास की ढेर सारी सम्भावनाएँ हैं। 1924 में लिखी गयी यह कविता उम्मीद से भरी है। कवि का विश्वास है कि आगे चलकर छायावादी कविताएँ और दूसरी-दूसरी विशेषताओं से युक्त होंगी।

2. 'प्रथम रश्मि' शीर्षक कविता 1919 में लिखी गयी थी। छायावाद के प्रारंभ होते ही लिखी गयी यह कविता भाव और भाषा की - दृष्टि से अत्यंत परिपक्व है। इसमें प्रकृति के प्रति बाल-सुलभ जिज्ञासा प्रकट की गयी है। पंत को इस तरह की कविताओं के कारण ही 'प्रकृति का सुकुमार कवि' कहा गया है। यह कविता एक तरह का जागरण गीत भी है।

3. 'प्रथम रश्मि' शीर्षक कविता में चिड़िया के लिए निम्नलिखित संबोधनों का उपयोग हुआ है - रंगिणि, बाल विहंगिनि, तरुवासिनि, अंतर्यामिनि, बहु दर्शिनि, नभचारिणि।

4. उत्तर 'मौन निमंत्रण' कविता में कवि को निम्नलिखित जगहों से निमंत्रण मिलता है - नक्षत्रों से, तड़ित से, सौरभ से, लहरों से, दल से, खद्योतों से, ओस से।

5. 'मौन निमंत्रण' शीर्षक कविता छायावाद की एक प्रतिनिधि रचना है। छायावाद की सबसे बड़ी पहचान यह बतायी गयी है कि इसमें प्रकृति में मनुष्य को देखने की प्रवृत्ति पायी जाती है। प्रकृति को मनुष्य की तरह समझने की प्रवृत्ति इन कविताओं को रोमानियत की भूमि से जोड़ती है। ये कविताएँ मनुष्य को प्रकृति की विराटता में समझने की कोशिश हैं। पंत ने इस कविता में यही लिखा है कि प्रकृति के विभिन्न घटक मुझे इशारे से अपनी तरफ बुलाते हैं। इस कविता में प्रकृति में मानवीय भाव समाए हुए दिखाए गए हैं और मनुष्य को एक ऐसे सौन्दर्य-बोध से जोड़ा गया है जो प्रकृति के रूप में विराट और व्यापक है।

6. i) ख

   ii) क

   iii) ख

   iv) घ

   v) ग

vi) ख

vii) घ

viii) क

ix) घ

x) ग

xi) क

xii) घ

xiii) घ

xiv) ग

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

इकाई 17 काव्य वाचन एवं विश्लेषण : महादेवी वर्मा

इकाई की रूपरेखा

17.0 उद्देश्य

17.1 प्रस्तावना

17.2 चयनित कविताओं का पाठ और विश्लेषण

17.3 सारांश

17.4 उपयोगी पुस्तकें

17.5 बोध प्रश्नों/अभ्यासों के उत्तर

17.0 उद्देश्य

यह इकाई महादेवी वर्मा के काव्य वाचन एवं विश्लेषण से संबंधित है। इस इकाई को पढ़ने का उद्देश्य है:–

- महादेवी वर्मा की पाँच कविताओं की विस्तृत व्याख्या;
- महादेवी वर्मा की कविताओं की व्याख्या की दिशाओं को जानना;
- इन कविताओं के माध्यम से छायावाद की विशिष्टताओं को जानना;
- महादेवी वर्मा की काव्य-भाषा को समझने का प्रयास; और
- महादेवी वर्मा की शब्द-योजना और शब्दावली को जानना।

17.1 प्रस्तावना

महादेवी वर्मा का जन्म 1907 में फर्रुखाबाद में हुआ था। इनकी पढ़ाई-लिखाई इंदौर और इलाहाबाद में हुई थी। इलाहाबाद में स्थित प्रयाग महिला विद्यापीठ में वे प्रधानाचार्या के पद पर कार्यरत रहीं। उनकी मृत्यु 1987 में हुई।

महादेवी वर्मा ने कविता के अलावा सशक्त गद्य भी लिखा था। उनकी गद्य रचनाएँ भाषा और विचार की दृष्टि से अत्यंत परिपक्व मानी जाती हैं। 'शृंखला की कड़ियाँ' के लेखों में उन्होंने स्त्री-मुक्ति के प्रश्नों को जिस स्तर पर उठाया था वह आश्चर्यजनक है। मैनेजर पाण्डेय ने इस पुस्तक को रेखांकित करते हुए लिखा है कि सिमोन द बोउवार की पुस्तक 'द सेकेण्ड सेक्स' के प्रकाशन से भी पहले महादेवी की यह पुस्तक प्रकाशित हो चुकी थी और इसके लेख तो और भी पहले प्रकाशित हो चुके थे। महादेवी वर्मा ने 'चाँद' पत्रिका के 'विदुषी अंक' का सम्पादन 1935 में किया था। यह अंक हिंदी में हुए स्त्री-विमर्श की परम्परा में विशेष महत्त्व रखता है। यह अंक उस जमाने में आया था जब इस तरह के विषय पर सोच-विचार की प्रवृत्ति आम नहीं थी। महादेवी का वैचारिक गद्य लेखन महत्त्वपूर्ण है।

छायावाद और रहस्यवाद की कवि के रूप में महादेवी वर्मा का स्थान अक्षुण्ण है। उनके पाँच काव्य-संग्रहों की कविताओं में छायावादी-रहस्यवादी प्रवृत्तियाँ तो हैं ही, उनमें स्त्री की पीड़ा और मुक्ति के प्रसंग भरे पड़े हैं। इनमें पीड़ा का विवरण भी व्यक्तित्व की दृढ़ता को व्यक्त करने के लिए किया गया है। इनमें प्रेम और प्रेमी का जिक्र भी मुक्ति के प्रतीक के रूप में किया गया है। महादेवी कोरी भावुकता की कविताएँ नहीं लिखती हैं। उनकी कविताओं में वैचारिक दृढ़ता हमेशा बनी रही।

काव्य-कृतियाँ

नीहार (1930), रश्मि (1932), नीरजा (1935), सांध्यगीत (1936), दीपशिखा (1942), हिमालय (1963), सप्तपर्णा (अनूदित - 1966), प्रथम आयाम (1982), अग्निरेखा (1990)

गद्य-कृतियाँ

अतीत के चलचित्र (रेखाचित्र - 1941), शृंखला की कड़ियाँ (नारी-विषयक सामाजिक निबंध - 1942), स्मृति की रेखाएँ (रेखाचित्र - 1943), पथ के साथी (संस्मरण - 1956), क्षणदा (ललित निबंध - 1956), साहित्यकार की आस्था तथा अन्य निबंध (आलोचनात्मक - 1960), संकल्पिता (आलोचनात्मक - 1969), मेरा परिवार (पशु-पक्षियों के संस्मरण - 1971), चिंतन के क्षण (1986)

संकलन

यामा (नीहार, रश्मि, नीरजा, सांध्यगीत का संग्रह/1936), संधिनी (कविता-संग्रह/1964), स्मृतिचित्र (गद्य-संग्रह - 1966), महादेवी साहित्य (भाग - 1 - 1969), महादेवी साहित्य (भाग - 2 - 1970), महादेवी साहित्य (भाग - 3 - 1970), गीतपर्व (कविता-संग्रह - 1970), स्मारिका (1971), परिक्रमा (कविता-संग्रह - 1974), सम्भाषण (कविता-संग्रह - 1975), मेरे प्रिय निबंध (निबंध-संग्रह - 1981), आत्मिका (कविता-संग्रह - 1983), नीलाम्बरा (कविता-संग्रह - 1983), दीपगीत (कविता-संग्रह -1983)

17.2 चयनित कविताओं का पाठ और विश्लेषण

एक

पंथ होने दो अपरिचित

पंथ होने दो अपरिचित प्राण रहने दो अकेला!

घेर ले छाया अमा बन,
आज कज्जल-अश्रुओं में रिमझिम ले यह घिरा घन,

और होंगे नयन सूखे,
तिल बुझे औ' पलक रूखे,
आर्द्र चितवन में यहाँ
शत विद्युतों में दीप खेला!

अन्य होंगे चरण हारे,
और हैं जो लौटते, दे शूल को संकल्प सारे,
दुखव्रती निर्माण उन्मद,
यह अमरता नापते पद,
बाँध देंगे अंक-संसृति
से तिमिर में स्वर्ण बेला!

दूसरी होगी कहानी,
शून्य में जिसके मिटे स्वर, धूलि में खोई निशानी,
आज जिस पर प्रलय विस्मित,
मैं लगती चल रही नित,
मोतियों की हाट औ'
चिनगारियों का एक मेला!

हास का मधु-दूत भेजो,
रोश की भरू-भंगिमा पतझार को चाहे सहे जो!

ले मिलेगा उर अचंचल
वेदना-जल, स्वप्न-शतदल,
जान लो वह मिलन एकाकी
विरह में है दुकेला!

दीप-शिखा, 1942,

सन्दर्भ और प्रसंग

'पंथ होने दो अपरिचित' शीर्षक कविता/गीत 'दीप-शिखा' (1942) में संगृहीत है। 'दीप-शिखा' की कविताओं में महादेवी की वैचारिक दृढ़ता पहले की तुलना में और भी बढ़ी हुई दिखाई पड़ती है। उनका यह मत है कि चाहे जो हो जाए, हमें अपने काम और अपनी वैचारिकी पर दृढ़ होना चाहिए।

व्याख्या

इस कविता में महादेवी कहती हैं कि मैं जिस रास्ते पर चलना चाहती हूँ वह मेरे लिए नया हो सकता है, अपरिचित हो सकता है, उस रास्ते की कठिनाइयों का अनुमान मुझे नहीं भी हो सकता है। यह भी हो सकता है कि इस यात्रा में मेरी सहायता करनेवाला कोई न हो! संभव है कि मेरा सहारा केवल मेरा आत्मबल हो! तब भी कोई बात नहीं! महादेवी पूरे विश्वास के साथ कहती हैं कि पंथ को अपरिचित होने दो और मेरे प्राणों को अकेला रहने दो! मैं पीछे नहीं हटूँगी। यह रास्ता प्रिय तक पहुँचानेवाला है। यह कविता दुहरा अर्थ रखती है। एक अर्थ है स्त्री के संघर्ष से सम्बन्धित और दूसरा अर्थ है प्रिय-पथ पर चलने की कठिनाइयों से संघर्ष।

इस कविता में दो पक्ष हैं - रास्ते में आनेवाली कठिनाइयाँ और अपनी हिम्मत। महादेवी कहती हैं कि यदि मेरी छाया अमावस्या की काली रात बनकर घेर ले, घिरे हुए बादलों से ऐसे बारिश हो मानो निर्मल आँसू बरस रहे हों! फिर भी मैं हार नहीं मानूँगी। वे दूसरों की आँखें होंगी, जो विषम परिस्थितियों में दुखी होकर सूख जाती होंगी, उन आँखों के गोलक बुझ जाते होंगे, उनकी पलकें रूखी हो जाती होंगी! मेरी हिम्मत तो यह है कि डबडबाई आँखों में भी मैंने निगाहों की चमक बनाए रखी है, जैसे बरसते हुए आसमान में सैकड़ों बिजलियाँ ऐसे चमकती हैं मानो लगातार दीप जल रहे हों!

वे दूसरे ढंग के लोग होंगे जिनके कदम इन परेशानियों के कारण हार मान लेते होंगे। वे दूसरे ढंग के लोग होंगे जो रास्ते के काँटों को अपने संकल्प सौंप कर हारे हुए की तरह लौट जाते होंगे। मेरे पाँव अमरत्व की यात्रा कर रहे हैं। वे मृत्यु के भय से मुक्त हैं। उन्होंने दुःख को व्रत की तरह स्वीकार कर लिया है। वे निर्माण के प्रति उन्माद के स्तर तक का संकल्प ले चुके हैं। आशय यह है कि मैं हार नहीं मानूँगी। मेरे कदम सृष्टि की गोद में फैले हुए अँधेरे के बीच सुनहला सबेरा उत्पन्न कर देंगे।

पराजय की वह कहानी दूसरे ढंग की होगी, जहाँ संघर्ष करनेवालों की आवाज शून्य में समाकर मिट गयी होगी और उनकी प्रत्येक निशानी धूल में खो गयी होगी। मगर मेरे साथ यह सब नहीं हो सकता। मैं मोतियों की हाट और चिंगारियों का मेला लगा रही हूँ। आशय यह है कि मैं आँसुओं को क्रांति के रूप में ढाल देना चाहती हूँ। इसलिए आज इस हाट और मेला पर प्रलय भी विस्मित हो गया है। जो प्रलय मुझे मिटाने आया था, वह मेरी हिम्मत देखकर आश्चर्य से भर गया है।

कविता के अंत में महादेवी मानो अपने अज्ञात और अनंत प्रियतम को सम्बोधित करते हुए कहती हैं कि तुम चाहे प्रसन्न रहनेवाले वसंत को दूत बनाकर मेरे पास भेजो या भौंह चढ़ाकर रोष प्रकट करनेवाले पतझड़ को! मेरा हृदय सब कुछ सह लेगा। मेरा हृदय अचंचल रहकर, अपने दुःख के आँसुओं और कमल की तरह सुंदर सपनों को लेकर तुमसे

मिलेगा। एक बात तय है कि वह मिलन मुझे अकेला कर देगा, क्योंकि संघर्ष की जिन प्रेरणाओं ने मेरे व्यक्तित्व का निर्माण किया है उन सबकी पूर्णाहुति इस मिलन में हो जाएगी। यह मिलन मेरे-तुम्हारे द्वैत को समाप्त कर देगा। द्वैत की समाप्ति मानो हमारे अस्तित्व-व्यक्तित्व को घुला-मिला लेने के समान है। इस तरह यह मिलन मुझे एकाकी हो जाने का एहसास कराएगा, जबकि विरह की स्थिति में मुझे एहसास है कि तुम भी हो और मैं भी हूँ। मेरे लिए मिलन में एकाकी हो जाने का भाव है और विरह में दोनों के अस्तिववान होने का भाव!

काव्य सौष्ठव/विशेष

- चाहे जो हो जाए हमें अपने काम और अपनी वैचारिकी पर दृढ़ होना चाहिए।
- यह कविता दुहरा अर्थ रखती है। एक अर्थ है स्त्री के संघर्ष से सम्बन्धित और दूसरा अर्थ है प्रिय-पथ पर चलने की कठिनाइयों से संघर्ष।
- इस कविता में महादेवी मानो अपने अज्ञात और अनंत प्रियतम को भी सम्बोधित कर रही हैं।
- 28 और 14 मात्राओं की पंक्तियों से इस कविता का निर्माण हुआ है।

कठिन शब्द

अपरिचित - अज्ञात या अनजान प्रिय-पथ, अमा - अँधेरी रात, कज्जल-अश्रुओं - एकदम साफ आँसुओं की तरह बारिश का पानी, तिल बुझे - जिन आँखों के काले, तारक-गोलों में निराशा भरी हो, चितवन - दृष्टि, शत विद्युतों - चमकती हुई सैकड़ों आकाशीय बिजलियाँ, चरण हारे - निराश होकर थक चुके कदम, शूल - काँटे, कठिनाइयाँ, दुखव्रती - (इन पैरों ने) दुःख उठाकर भी अपना काम करने का संकल्प ले रखा है, निर्माण उन्मद - जिसने निर्माण का दृढ़ संकल्प ले लिया हो, अंक-संसृति - सृष्टि की गोद में, स्वर्ण बेला - सुनहली सुबह, उत्साह का वातावरण, विस्मित - आश्चर्य से भरा हुआ, हास - जो हँसी-खुशी से भरा हुआ हो, मधु-दूत - वसंत ऋतु, जो पराग और मादकता का सन्देशवाहक हो, भरू-भंगिमा - भौंहों के विभिन्न संचालन, उर अचंचल - स्थिर भाव से युक्त ह्रदय, वेदना-जल - दुःख के आँसू, स्वप्न-शतदल - कमल के फूल की तरह खिले हुए सपने, मिलन एकाकी - मिलन में एकमेक होकर अपने और दूसरे के अस्तित्व को भूल जाने का भाव, दुकेला - विरह में दोनों पक्षों के अस्तित्ववान होने का भाव

दो

यह मन्दिर का दीप

यह मंदिर का दीप इसे नीरव जलने दो!

रजत शंख-घड़ियाल स्वर्ण वंशी-वीणा-स्वर,
गए आरती वेला को शत-शत लय से भर,
जब था कल कंठों का मेला,
विहँसे उपल तिमिर था खेला,
अब मंदिर में इष्ट अकेला,
इसे अजिर का शून्य गलाने को गलने दो!

चरणों से चिह्नित अलिंद की भूमि सुनहली,
प्रणत शिरों के अंक लिए चन्दन की दहली,
झरे सुमन बिखरे अक्षत सित,
धूप-अर्घ्य नैवेद्य अपरिमित
तम में सब होंगे अंतर्हित
सबकी अर्चित कथा इसी लौ में पलने दो!

पल के मनके फेर पुजारी विश्व सो गया,
प्रतिध्वनि का इतिहास प्रस्तरों बीच खो गया
साँसों की समाधि सा जीवन,
मसि-सागर का पंथ गया बन
रुका मुखर कण-कण का स्पंदन,
इस ज्वाला में प्राण-रूप फिर से ढलने दो!

झंझा है दिग्भ्रांत रात की मूर्छा गहरी,
आज पुजारी बने, ज्योति का यह लघु प्रहरी,
जब तक लौटे दिन की हलचल,
तब तक यह जागेगा प्रतिपल,
रेखाओं में भर आभा-जल
दूत साँझ का इसे प्रभाती तक चलने दो!

(दीप-शिखा, 1942)

कठिन शब्द

नीरव जलने दो - खामोशी से अपना काम करने दो, रजत शंख-घड़ियाल - चाँदी के रंग के शंख और घड़ियाल (पूजा में प्रयुक्त एक वाद्य), स्वर्ण वंशी-वीणा-स्वर - सोने की तरह मोहक बाँसुरी और वीणा के स्वर, आरती वेला - देवता की आरती करने का समय, कल कंठों का मेला - सुंदर कंठ-स्वरों से गायी गई आरती का सामूहिक स्वर, विहँसे उपल - मानो मंदिर-निर्माण में प्रयुक्त पत्थर भी हँस रहे हों, इष्ट अकेला - (मंदिर में) भगवान अकेले हैं, अजिर का शून्य - आँगन का सूनापन, गलाने को गलने दो - (सूनेपन को) समाप्त करने के लिए (इस दीप को) जल-जल कर गलने दो, चरणों से चिह्नित - भक्तों के चरणों के निशान, अलिंद की भूमि - बाहरी दरवाजे के सामने की जगह, मन्दिर के बाहरी द्वार के पास की जगह जहाँ श्रद्धालु जूते-चप्पल खोल देते हैं, प्रणत शिरों के अंक - झुककर मस्तक सटाने से पड़े हुए निशान, दहली - देहरी, चौखट अक्षत सित - चावल के सफेद दाने जिनका उपयोग पूजा में किया जाता है धूप-अर्घ्य - धूप-बत्ती और देवता को समर्पित की जानेवाली पूजन सामग्री, नैवेद्य - देवता को समर्पित की जानेवाली भोज्य वस्तु, अर्चित कथा - पूजा-अर्चना की बातें, पल के मनके - क्षण-रूपी मनका (माला के दाने), प्रतिध्वनि का इतिहास - दिन भर मन्दिर में होनेवाली ध्वनियाँ अब रात में अनुगूँज बनकर इतिहास हो गयी हैं, प्रस्तरों - पत्थरों, मसि-सागर - स्याही-रूपी अन्धकार का समुद्र, झंझा - शोर करती हुई बहनेवाली वायु, दिग्भ्रांत - जिसे दिशाओं का बोध न रह गया हो, भटका हुआ, आभा-जल - प्रकाश-रूपी नमी (को संध्या में भरते हुए दीपक), दूत साँझ का - ये दीपक संध्या के सन्देशवाहक की तरह हैं, प्रभाती - सुबह में गाया जानेवाला गीत

सन्दर्भ और प्रसंग

'यह मंदिर का दीप' कविता में महादेवी वर्मा ने कहना चाहा है कि साधक को अपनी साधना करने दो! साधक प्रचार के लिए साधना नहीं करता है। वह किसी को दिखाने के लिए या प्रशंसा के लिए साधना नहीं करता है। वह अपने संकल्प को पूरा करने के लिए साधना करता है। इस कविता में मन्दिर के दीप को साधक का प्रतीक बनाया गया है।

व्याख्या

महादेवी वर्मा कहती हैं कि यह मंदिर का दीपक है। इसे चुपचाप जलने दिया जाए। यह दीपक एक संकल्प के साथ जल रहा है। इसका संकल्प यह है कि मंदिर का इष्ट देव अँधेरे में न रहे। वह पूरी रात जलकर अपने देवता के घर में प्रकाश बनाए रखना चाहता है।

महादेवी मंदिर की दिनचर्या की चर्चा करती हुई कहती हैं कि चाँदी के रंग के शंख-घड़ियाल और सोने के रंग की वंशी-वीणा की मधुर ध्वनियों ने आरती के समय को सैकड़ों लयों से भर दिया था। उस समय सुंदर कंठ-ध्वनियों का मानो मेला लगा हुआ था। इन

सबके प्रभाव से मानो मंदिर की दीवारों में लगे पत्थर भी विहँस पड़े थे। मंदिर के अँधेरे कोने भी मानो खेलने लगे थे। मगर रात होते ही सब लोग चले गए, मंदिर का दरवाजा बंद कर दिया गया। अब मंदिर के इष्ट देवता नितांत अकेले रह गए हैं। मंदिर का आँगन सूना-सूना लग रहा है। महादेवी कहती हैं कि मंदिर के इस सूनेपन को दूर करने के लिए इस दीपक को जल-जलकर गलने दो! यदि यह दीपक नहीं जलेगा तो यह सूनापन दूर नहीं हो सकेगा।

कवयित्री पुनः मंदिर की दिनचर्या का जिक्र करते हुए कहती हैं कि दिन भर में न जाने कितने श्रद्धालु मन्दिर में आए। उनके कदमों के निशान से अलिंद की भूमि भर गयी और सुनहली लगने लगी। श्रद्धालुओं के मस्तक झुकाकर स्पर्श करने से चंदन का चौखट निशानों से भर गया है। दिन भर मन्दिर में फूल झरते रहे और अक्षत बिखरते रहे। पूजा-पाठ और भोग चढ़ायी जानेवाली असंख्य वस्तुओं से मंदिर भरा पड़ा था। मगर रात होते ही ये सारी चीजें अँधेरे में डूब जाएँगी। दिन भर में जितने लोगों ने पूजा-अर्चना की है उन सबकी पूजा की कथा इस दीपक की लौ में पलने दो! यदि यह दीपक नहीं जलेगा तो सबकी अर्चित-कथा मानो अँधेरे में डूब जाएगी।

एक-एक क्षण मानो माला के दाने की तरह बढ़ता गया और रात आ गयी। विश्व-रूपी पुजारी इन दानों को, जाप करते हुए बढ़ाता गया और अंत में थक कर सो गया। मंदिर में ध्वनियों की गूँज-अनुगूँज मौजूद रहती है। रात होने पर इन सबका ब्यौरा मानो पत्थर की दीवारों में खो गया। चारों तरफ ऐसा सन्नाटा था कि सोये हुए लोगों की साँसों का आना-जाना भर सुनायी पड़ रहा था। ऐसा लग रहा था मानो जीवन साँसों की समाधि बन गया हो! चारों तरफ अँधेरा ऐसे फैला मानो स्याही का समुद्र फैला हो और उस तक जाने के रास्ते बिखरे हों! रात में सब कुछ इतना खामोश हो गया था मानो कण-कण की गतिशीलता और मुखरता स्थगित हो गयी हो! दीपक की ज्वाला में इन सब खोयी हुई चीजों को अपना रूप प्राप्त कर लेने दो और उन सबमें प्राण-तत्त्व का संचार हो जाने दो! अगर दीपक नहीं होगा तो ये सारी चीजें अँधेरे में डूब जाएँगी।

रात हो गयी है। शोर करती हुई वायु प्रवाहित हो रही है। वह ऐसे बह रही है मानो दिशा भूल गयी हो! कभी इधर से कभी उधर से! रात ऐसे सो गयी है मानो गहरी बेहोशी में हो। मेरी इच्छा है कि आज यह दीपक पुजारी बन जाए, वह प्रकाश का एक छोटा-सा प्रहरी है। जब तक दिन की हलचल लौट आए तब तक के लिए यह साधक दीपक जागता रहेगा। यह रात की प्रत्येक अँधेरी रेखा में रोशनी की सजलता को भर देगा। यह दीपक शाम के दूत की तरह है। इसे प्रभाती गाए जाने तक जलने दो!

काव्य सौष्ठव / विशेष

- साधक किसी को दिखाने के लिए या प्रशंसा के लिए साधना नहीं करता है। वह अपने संकल्प को पूरा करने के लिए साधना करता है।
- इस कविता में मन्दिर के दीप को साधक का प्रतीक बनाया गया है।
- 24 और 16 मात्राओं की पंक्तियों से इस कविता का निर्माण हुआ है।

तीन

मैं नीर भरी दुःख की बदली

मैं नीर भरी दुख की बदली!

स्पंदन में चिर निस्पंद बसा,
क्रंदन में आहत विश्व हँसा,
नयनों में दीपक से जलते
पलकों में निर्झरिणी मचली!

मेरा पग पग संगीत भरा,
श्वासों से स्वप्न-पराग झरा,
नभ के नव रंग बुनते दुकूल,
छाया में मलय-बयार पली!

मैं क्षितिज-भृकुटि पर घिर धूमिल,
चिंता का भार बनी अविरल,
रज-कण पर जल-कण हो बरसी
नवजीवन-अंकुर बन निकली!

पथ को न मलिन करता आना,
पद-चिह्न न दे जाता जाना,
सुधि मेरे आगम की जग में
सुख की सिहरन हो अंत खिली

विस्तृत नभ का कोई कोना,
मेरा न कभी अपना होना,
परिचय इतना इतिहास यही
उमड़ी कल थी मिट आज चली!

सांध्य गीत, 1936,

कठिन शब्द

नीर भरी – पानी या आँसू से भरी हुई, दुःख की बदली - दुःख से निर्मित बादलों की तरह, स्पंदन - सूक्ष्म गतिमयता, सिहरन के स्तर की गति, चिर निस्पंद - स्थायी रूप से गतिहीनता, आहत विश्व - दुखी संसार, स्वप्न-पराग - सपनों की तरह सुंदर परागकण, दुकूल - दुपट्टा, छाया में - छत्रच्छाया में, प्रभाव में, मलय-बयार - सुगंधित वायु, क्षितिज-भृकुटि - क्षितिज मानो उस बदली की भृकुटी के समान है, धूमिल - धुएँ के रंग का, नवजीवन-अंकुर - नए जीवन के प्रतीक अंकुर के रूप में, सुधि - याद, स्मृति, आगम - जन्म, आना, विस्तृत नभ - विशाल आकाश, रूपी संसार कोई कोना - कोई भी हिस्सा, इतिहास - जीवन-वृत्त, उमड़ी कल थी - जन्म हुआ था, मिट आज चली - मृत्यु हो गयी

सन्दर्भ और प्रसंग

महादेवी वर्मा की यह एक प्रसिद्ध कविता है। यह 'सांध्य-गीत' (1936) काव्य-संग्रह में संगृहीत है। महादेवी वर्मा ने इस कविता में स्त्री के जीवन की तुलना बदली (बादल) से की है। यह कविता बदली के रूपक में स्त्री-जीवन की परेशानियों और विशिष्टताओं को व्यक्त करती है। इस कविता में केवल दुःख ही नहीं है बल्कि स्त्री-जीवन की कुछ विशिष्टताओं को भी व्यक्त किया गया है।

व्याख्या

महादेवी कहती हैं कि मैं आँसुओं से भरी हुई दुःख की बदली के समान हूँ। यहाँ 'मैं' का अर्थ केवल कवयित्री से नहीं है, बल्कि स्त्री-समाज और उसके जीवन से है। महादेवी बदली के रूपक के माध्यम से बताना चाहती हैं कि स्त्री के जीवन में कितना दुःख है और स्त्री का जीवन किस तरह कुछ विशेषताओं से बना हुआ है। इस कविता में समानांतर रूप से बदली का अर्थ और स्त्री का अर्थ मौजूद है।

बदली स्पन्दित होती है। उसके स्पंदन में न जाने कितने समय का निस्पंदन मौजूद होता है। बदली जब क्रंदन (गड़गड़ाहट और बारिश के द्वारा) करती है तो पानी की प्रतीक्षा में दुखी संसार खुशी से हँस पड़ता है। बदली की आँखों में बिजली चमकती है, मानो दीपक जल उठते हैं। उसकी पलकों में निर्झरिणी मचल उठती है और बारिश होने लगती है। इस रूपक को स्त्री-जीवन के सन्दर्भ में समझें तो कह सकते हैं कि स्त्री की सिहरन तक में न जाने कितनी खामोशियों की अभिव्यक्ति होती है। उसके दुःख का उपहास इस स्तर

तक किया गया है कि जब वह रोती है तब शाश्वत रूप से दुखी इस संसार को भी खुशी मिलती है। स्त्री की आँखों में उम्मीद की चमक हमेशा बनी रही और उन्हीं आँखों से वह रोती भी रही।

बदली का पग-पग संगीत से भरा है। जब वह चलती है तब अपने राग में संगीतमय ध्वनि करती हुई चलती है। बदली के छा जाने पर साँसों की तरह जो हवा चलती है उसके प्रभाव से न जाने कितने सुगन्धित सपनों का जन्म होता है। बदली कहती है कि आकाश अपने नए-नए रंगों से मेरे लिए दुपट्टे का निर्माण करता है। मेरी छाया में चलनेवाली हवा मलय-बयार की तरह सुहानी होती है। रूपक का अर्थ इस तरह खुलता है कि स्त्री को प्रकृति ने अपेक्षाकृत ज्यादा कलात्मकता बनाया है। उसके चलने तक में प्रकृति ने एक तरह की लयात्मकता दी है। चाहे जितना भी दुःख रहा हो, स्त्री की साँसों में सपने जरूर पलते रहे। रंगों की शोभा उस पर ही खिल पाई और उसकी छाया में न जाने कितने सपनों को पलने का मौका मिला। स्त्री की इस भूमिका को ठीक से समझने के लिए पुरुष से उसके रिश्ते को ध्यान में रखना प्रासंगिक होगा। पुरुषों ने कला के विभिन्न माध्यमों में स्त्री का जो व्यक्तित्व गढ़ा है, उनसे भी इन बातों की पुष्टि होती है। कलात्मक रचनाओं में बताया गया कि स्त्री सपनों को जन्म देती है, उसका साहचर्य सुगंध से भरा होता है, उसकी सुंदरता पर पुरुष न्योछावर हो जाता है आदि।

धुएँ की तरह बदली जब क्षितिज पर छा जाती है, तब मौसम के बिगड़ने की चिंता प्रकट की जाने लगती है। मैं धूलकणों पर जल बनकर बरसती हूँ। मेरे बरस जाने से नए जीवन को अंकुरित होने का अवसर प्राप्त होता है। स्त्री के होने की सम्भावना से ही चिंता प्रकट की जाने लगती है। मगर मनुष्य की सृष्टि को नवजीवन प्रदान करने में उसकी भूमिका सबसे बड़ी है।

बदली छाती है, आकाश में चलती है और बरस जाती है। मगर वह अपने रास्ते को कभी भी मलिन नहीं करती है। उसके चले जाने के बाद आकाश-मार्ग एकदम साफ-सुथरा नजर आता है। अपने पद-चिह्नों को छोड़ते जाने का अहंकार भी उसमें नहीं है। लेकिन यह सच है कि मेरे आने की स्मृति संसार को सुख की सिहरन से भर देती है। स्त्री संसार में आती है, मगर उसकी भूमिका कहीं दर्ज नहीं की जाती है। पुरुषों के नाम और काम याद रखे जाते हैं। लेकिन स्त्री के आगमन को जब-जब याद किया गया, एक सुखद रोमांच की अनुभूति हुई।

इस विस्तृत आकाश का कोई कोना बदली के नाम दर्ज नहीं हो सका। उसका परिचय और इतिहास बस इतना ही रहा कि कल वह उमड़ी थी और आज मिट गयी। स्त्री अधिकार-विहीन रही। इस विस्तृत संसार में वह अनेक अधिकारों से वंचित रही। जिन अधिकारों को प्राप्त कर पुरुष अपने को इतिहास में बनाए रख सका, उन अधिकारों से वंचित रहने के कारण स्त्री के हिस्से अमरता नहीं आयी। वह मौजूद तो रही, मगर दर्ज न हो सकी। उसका परिचय इतना ही रहा कि वह किसी पुरुष के नाम से पहचानी गयी। उसके बारे में बस इतना ही सच रहा कि उसका जन्म हुआ था और फिर उसकी मृत्यु हो गयी। उसके जीवन की भूमिका अलिखित रह गयी।

इस तरह महादेवी वर्मा ने इस कविता में बदली के रूपक से स्त्री-जीवन के दुःख को व्यक्त किया है। समाज के द्वारा जो उपेक्षा मिली है उसका भाव-प्रवण चित्रण इस कविता की विशेषता है। महादेवी इसमें केवल दुःख का बयान करके रुक नहीं जाती हैं, बल्कि वे स्त्री की सकारात्मक भूमिका को भी बताती चलती हैं।

काव्य सौष्ठव / विशेष

- यह कविता बदली के रूपक में स्त्री-जीवन की परेशानियों और विशिष्टताओं को व्यक्त करती है। इस कविता में केवल दुःख ही नहीं है बल्कि स्त्री-जीवन की कुछ विशिष्टताओं को भी व्यक्त किया गया है।

- महादेवी की इस कविता को बहुत प्रसिद्धि मिली। इसे उनकी प्रतिनिधि कविता के तौर पर पहचाना गया।
- पूरी कविता में 16-16 मात्राओं की पंक्तियों का उपयोग हुआ है।

चार

चिर सजग आँखें उनींदी

चिर सजग आँखें उनींदी आज कैसा व्यस्त बाना!
जाग तुझको दूर जाना!

अचल हिमगिरि के हृदय में आज चाहे कम्प हो ले,
या प्रलय के आँसुओं में मौन अलसित व्योम रो ले,

आज पी आलोक को डोले तिमिर की घोर छाया,
जागकर विद्युत-शिखाओं में निठुर तूफान बोले!

पर तुझे है नाश-पथ पर चिह्न अपने छोड़ आना!
जाग तुझको दूर जाना!
बाँध लेंगे क्या तुझे यह मोम के बंधन सजीले?
पंथ की बाधा बनेंगे तितलियों के पर रँगीले?

विश्व का क्रंदन भुला देगी मधुप की मधुर गुनगुन,
क्या डुबा देंगे तुझे यह फूल के दल ओस-गीले?

तू न अपनी छाँह को अपने लिए कारा बनाना!
जाग तुझको दूर जाना!
वज्र का उर एक छोटे अश्रु-कण में धो गलाया,
दे किसे जीवन सुधा दो घूँट मदिरा माँग लाया?

सो गई आँधी मलय की वात का उपधान ले क्या?
विश्व का अभिशाप क्या चिर नींद बनकर पास आया?

अमरता-सुत चाहता क्यों मृत्यु को उर में बसाना?
जाग तुझको दूर जाना!

कह न ठंडी साँस में अब भूल वह जलती कहानी,
आग हो उर में तभी दृग में सजेगा आज पानी,

हार भी तेरी बनेगी मानिनी जय की पताका,
राख क्षणिक पतंग की है अमर दीपक की निशानी!

है तुझे अंगार-शय्या पर मृदुल कलियाँ बिछाना!
जाग तुझको दूर जाना!

सांध्य गीत, 1936

सन्दर्भ और प्रसंग

'चिर सजग आँखें उनींदीकृ' शीर्षक कविता महादेवी वर्मा की उद्‌बोधनात्मक कविता है। यह 'सांध्य-गीत' (1936) में संगृहीत है। इस कविता में महादेवी कहती हैं कि आज तुम शिथिल क्यों हो! तम्हारी आँखें हमेशा जागरूक रही हैं। अच्छा यही है कि तुम जाग जाओ! अब समय आ गया है कि चाहे कितनी भी विपरीत परिस्थिति आए तुम्हें अडिग रहना है।

कठिन शब्द

चिर सजग आँखें - सदा सजग रहनेवाली दृष्टि, उनींदी - नींद के आलस्य में होना, व्यस्त बाना - अव्यवस्थित, वेश-भूषा, जाग - जागृत हो जाओ, सचेत हो जाओ, अचल हिमगिरि - अटल भाव से खड़ा हिमालय पर्वत, प्रलय के आँसुओं में - प्रलयकाल में होनेवाली भीषण बारिश, मौन अलसित व्योम - मानो दुःख के कारण आकाश मौन और शिथिल हो गया है, तिमिर की घोर छाया - घना अंधकार, नाश-पथ - मृत्यु के पथ पर, मोम के बंधन सजीले - आकर्षक मगर मिथ्या चीजों से जुड़ाव, पंथ की बाधा - रास्ते की रुकावट, तितलियों के पर रँगीले - झूठे आकर्षण की तरह तितलियों के रँगीले पंख, विश्व का क्रंदन - संसार का दुःख, मधुप की मधुर गुनगुन - भौंरों का मीठा गुंजार, अपनी छाँह - अपनी कमियों के प्रति आकर्षित होना, कारा - जेल, बंधन, वज्र का उर - वज्र की तरह ताकतवर हृदय, उपधान - तकिया, अमरता-सुत - अमरत्व की दार्शनिकता से युक्त पूर्वजों की संतान, अंगार-शय्या - अंगारों से बनी सेज, संघर्ष के कठिन रास्ते, मृदुल कलियाँ बिछाना - कठिनाई में भी कोमलता को बनाए रखना

व्याख्या

'चिर सजग आँखें उनींदी' शीर्षक कविता में महादेवी वर्मा उद्‌बोधित करती हुई कहती हैं कि तुम्हारी चिर सजग आँखें आज नींद की खुमारी से भरी हुई क्यों हैं? आज तुम्हारा व्यक्तित्व अस्त-व्यस्त क्यों है? तुम जागृत अवस्था में रहने का अभ्यास करो! क्योंकि तुम्हें लंबी दूरी तय करनी है। महादेवी उन लोगों को संबोधित कर रही हैं जिनमें संघर्ष की इच्छा और क्षमता है। वे उन्हें सचेत कर रही हैं कि आलस्य में मत पड़ो! कविता की अगली पंक्तियों में कठिनाइयों का जिक्र किया गया है और कहा गया है कि चाहे जैसी भी कठिनाई आए, तुम्हें संघर्ष से पीछे नहीं हटना है।

कठिनाइयों के चर्चा करते हुए वे कुछ रूपक गढ़ती हैं। अचल रहनेवाले हिमालय पर्वत के हृदय में आज चाहे कंपन क्यों न उत्पन्न हो जाए! यह आकाश चुपचाप ठहरकर भले ही प्रलयकाल की तरह लगातार बरसता रहे! आज भले ही प्रकाश को अन्धकार पी जाए और चारों तरफ केवल डोलती छायाएँ दिखाई पड़ें! आज भले ही आकाश की बिजलियों में निष्ठुर तूफान अट्टहास कर उठे! इन तमाम विपरीत परिस्थितियों के बावजूद तुम्हें संघर्ष को छोड़ना नहीं होगा। इस नाश-पथ पर अपने निशान छोड़ते हुए तुम्हें आगे बढ़ना होगा! यह सब करने के लिए जरूरी है कि तुम्हें जागरूक होना पड़ेगा!

अगली पंक्तियों में महादेवी कहती हैं कि तुम्हारे संघर्ष को कमजोर करने के लिए कुछ मनमोहक चीजें भी रास्ते में मिलेंगी। इन आकर्षणों से बचे बगैर तुम संघर्ष नहीं कर सकते। अगर तुम सचमुच साधक हो, तो ये आकर्षण तुम्हें भटका नहीं पाएँगे। उदाहरण देते हुए वे पुनः रूपकों का सहारा लेती हैं। ये मोम के सजीले बंधन हैं, क्या ये तुम्हें अपने में बाँध लेंगे? ये तितलियों के रँगीले पंख हैं, क्या ये तुम्हारे रास्ते की बाधा बनेंगे? यह विश्व दुखी है, इसके क्रंदन को भौंरों की मधुर गुनगुन की ओट में भुलाया जा सकता है क्या? फूलों की पंखुड़ियों पर ओस की बूँदें बहुत सुंदर लगती हैं, मगर इस सुंदरता में संसार के दुःख को भुलाया जा सकता है क्या? तुम अपनी ही छाया की सुंदरता में कैद मत हो जाना, क्योंकि यह छाया एक भ्रम है। तुम्हें सच को पहचानना है!

तुम्हारा हृदय मजबूत है। उसकी दृढ़ता वज्र की तरह है। मगर भावुकता के आँसुओं में तुमने अपने मजबूत मन को कमजोर बना लिया है। तुमने न जाने किसे अपना जीवन-अमृत सौंप दिया है। अपने जीवन की अमरता के बदले तुमने मदिरा के कुछ घूँट प्राप्त कर लिए हैं। तुम तो आँधी की तरह प्रचण्ड थे, मगर आज लगता है कि वसंती हवा के सहारे तुमने सो जाने का निर्णय ले लिया है। ऐसा लगता है कि संसार के संघर्षों से घबरा कर तुमने गहरी नींद में सो जाने का निर्णय ले लिया है। तुम अमर पूर्वजों की संतान हो! तुम मृत्यु को अपने मन में क्यों बसा लेना चाहते हो! तुम जागृति की ओर देखो, तुम्हें लम्बी दूरी तय करनी है।

संघर्ष के इतिहास से प्रेरणा मिलती है। ताप से भरी हुई उस कहानी को भूलने की जरूरत नहीं। तुम ठण्डी साँस लेकर यह न कहो कि अब मैं संघर्ष की बातों को याद करना नहीं चाहता। याद रखना चाहिए कि जब हमारी चेतना में संघर्ष की बेचौनी होती है तभी जीवन की कोमलता की सार्थकता होती है। हृदय में आग हो, तभी आँखों में आँसुओं की सुंदरता भाती है। हो सकता है कि संघर्ष करते हुए तुझे हार का सामना करना पड़े! इससे घबराने की जरूरत नहीं है। अपने मान-सम्मान के लिए संघर्ष करते हुए, मिली हुई हार को भी, जय की पताका समझना चाहिए। पतंग तो क्षण भर में राख हो जाता है, मगर दीपक में उसके संघर्ष की निशानी बनी रहती है। इतना याद रखना कि यह रास्ता आसान नहीं होता है। अंगारों की सेज पर कोमल कलियों को बिछाने का अर्थ है कलियों की शहादत! तुम्हें अपने अमूल्य को त्यागने के लिए तैयार होना पड़ेगा! इन सबका यही उपाय है कि तुम जागृति की चेतना से लैश रहो!

काव्य सौष्ठव / विशेष

- यह कविता उन लोगों को संबोधित है जिनमें संघर्ष की इच्छा और क्षमता है। उन्हें सचेत किया गया है कि आलस्य में मत पड़ो!
- तुम्हारे संघर्ष को कमजोर करने के लिए कुछ मनमोहक चीजें भी रास्ते में मिलेंगी। इन आकर्षणों से बचे बगैर तुम संघर्ष नहीं कर सकते।
- इस कविता का यह टुकड़ा प्रसिद्ध हुआ - 'तू न अपनी छाँह को अपने लिए कारा बनाना! जाग तुझको दूर जाना!
- पूरी कविता में 28-28 मात्राओं की पंक्तियों का उपयोग हुआ है। टेक की पंक्ति 'जाग तुझको दूर जाना' में 14 मात्राएँ हैं।

पाँच

सब बुझे दीपक जला लूँ

सब बुझे दीपक जला लूँ
घिर रहा तम आज दीपक-रागिनी अपनी जगा लूँ!

क्षितिज-कारा तोड़ कर अब
गा उठी उन्मत्त आँधी,
अब घटाओं में न रुकती
लास-तन्मय तड़ित् बाँधी,
धूलि की इस वीण पर मैं तार हर तृण का मिला लूँ!

भीत तारक मूँदते दृग

भ्रांत मारुत पथ न पाता,
छोड़ उल्का अंक नभ में
ध्वंस आता हरहराता,
उँगलियों की ओट में सुकुमार सब सपने बचा लूँ!

लय बनी मृदु वर्तिका
हर स्वर जला बन लौ सजीली,
फैलती आलोक-सी
झंकार मेरी स्नेह गीली,
इस मरण के पर्व को मैं आज दीपावली बना लूँ!

देखकर कोमल व्यथा को
आँसुओं के सजल रथ में,
मोम-सी साधें बिछा दीं
थीं इसी अंगार-पथ में
स्वर्ण हैं वे मत कहो अब क्षार में उनको सुला लूँ!

अब तरी पतवार ला कर
तुम दिखा मत पार देना,
आज गर्जन में मुझे बस
एक बार पुकार लेना!
ज्वार को तरणी बना मैं, इस प्रलय का पार पा लूँ!
आज दीपक राग गा लूँ!

(दीप-शिखा, 1942,)

सन्दर्भ और प्रसंग

'सब बुझे दीपक जला लूँ' शीर्षक कविता/गीत 'दीप-शिखा' (1942) में संकलित है। इस कविता में महादेवी ने विपरीत परिस्थितियों में भी संघर्ष करने की इच्छा-शक्ति के बारे में बताया है। रोमानी तरीके से लिखी गई यह कविता बताती है कि संघर्ष के लिए मन की मजबूती बहुत जरूरी है। कोमल भावों के सहारे कठोर संघर्ष की राह दिखानेवाली यह कविता प्रेरक है।

व्याख्या

महादेवी इस कविता में बता रही हैं कि परिस्थितियाँ क्रमशः विपरीत होती जा रही हैं। ऐसे समय में जरूरी हो गया है कि मैं अपनी हर तरह की साधना को सजग कर लूँ! अपनी हर तरह की ऊर्जा को जागृत कर लूँ! वे प्रतीकों के माध्यम से कहती हैं कि अपने बुझे हुए सभी दीपकों को आज मैं जला लूँ! आज जब चारों तरफ अँधेरा छा रहा है तब मैं दीपक-राग का गायन करूँ ताकि बुझे हुए दीपक जाग जाएँ!

परिस्थितियाँ इतनी विपरीत हैं कि आँधियों ने दिशाओं की सीमाओं को तोड़ डाला हैं। आंधियाँ ऐसे चल रही हैं मानो वे पागल हो गयी हैं। बादलों की सीमाओं में बिजलियाँ नहीं समा रही हैं। ये विद्युत-शिखाएँ जब लपकती हैं तो लगता है मानो वे लास्य-भाव से भरकर तन्मयता के साथ नृत्य कर रही हैं! उड़ती हुई धूलि को मैं वीणा बना लेना चाहती हूँ और चाहती हूँ कि घास के हर तिनके को इस वीणा के तार के रूप में सजा लूँ!

तारे मानो भयभीत होकर आँखें बंद कर ले रहे हैं। हवाएँ ऐसे चल रही हैं मानो दिशा भूल कर भटक गयी हों! उल्काएँ आकाश की गोद को छोड़कर ऐसे गिरी आ रही हैं मानो साक्षात् विध्वंस शोर मचाता हुआ चला आ रहा हो! इन विषम परिस्थितियों में मैं अपनी ऊँगलियों की ओट से अपने सुकुमार सपनों को बचा लेना चाहती हूँ! महादेवी रोमानियत से भरी हुई लड़ाई को इस कविता में रूप दे रही हैं!

जो कोमल वर्तिका थी, उसने दीपक-राग के प्रत्येक स्वर को जला कर साध लिया है। अब वह लय से जलती हुई सजी-धजी-सी दिख रही है! मेरी करुणा से भरी हुई प्रत्येक पुकार ऐसे फैल रही है, जैसे प्रकाश फैलता है। ध्वनि और प्रकाश का विकट प्रसार मेरी आँखों के सामने हो रहा है। यह मरण का पर्व है जब हर चीज जल रही है और चारों तरफ करुण वातावरण है। ऐसे में मैं इस मरण पर्व को दीपावली की तरह बना लेना चाहती हूँ!

कठिन शब्द

दीपक-रागिनी, दीपक राग - कहते हैं कि इस राग या रागिनी को सिद्धिपूर्वक गाने से दीपक जल उठते हैं, क्रांति की चेतना क्षितिज-कारा - क्षितिज मानो कारागार की तरह हैं, लास-तन्मय - अपने लास्य-भाव में तन्मय, जो अपनी धुन में मग्न हो, वीण - वीणा, भीत तारक - भयभीत सितारे, टिमटिमाते तारे मानो डरे हुए हैं, भ्रांत मारुत - दिशा भूली हुई हवा, दिग्भ्रमित लोग मृदु वर्तिका - कोमल बाती, मरण के पर्व - मृत्यु जब त्योहार की तरह लगने लगे, तरी पतवार - छोटी नाव और चप्पू, ज्वार को तरणी बना - ऊँची लहरों को नौका बना लेना, प्रतिकूल को अनुकूल बना लेना

मैंने कोमल व्यथा को आँसुओं के सजल रथ पर आते देखा था। उसे आते देखकर उसके स्वागत में मैंने अपने सपनों को मोम की तरह कोमल बनाकर उस रास्ते पर बिछा दिया था। यह अलग बात है कि वह रास्ता अंगारों से भरा था। मुझे मत बताओ कि मेरे सपने स्वर्ण-निर्मित हैं। परिस्थितियाँ इतनी विपरीत हैं कि इन स्वर्ण-निर्मित सपनों को मुझे धूल में सुला लेने दो!

इन कठिनाइयों के बीच मेरी मदद करने के क्रम में तुम ऐसा कभी मत करना कि मेरे लिए एक छोटी-सी नाव और पतवार लेकर चले आओ! यह भी मत करना कि मुझे किनारा दिखाओ! इस गर्जन-तर्जन से भरे माहौल में बस इतना करना कि मुझे एक बार पुकार लेना! मैं ज्वार की तरह उठती इन लहरों को ही नौका बना लूँगी और प्रलय को पार कर लूँगी! आज मुझे दीपक-राग गा लेने दो! मैं चाहती हूँ कि मेरे संघर्ष के प्रत्येक दीपक की लौ जल उठे!

काव्य सौष्ठव/विशेष

- इस कविता में विपरीत परिस्थितियों में भी संघर्ष करने की इच्छा-शक्ति के बारे में बताया गया है।
- यह कविता रोमानी तरीके से लिखी गई है।
- संघर्ष के लिए मन की मजबूती बहुत जरूरी है।
- कोमल भावों के सहारे कठोर संघर्ष की राह दिखानेवाली यह कविता प्रेरक है।
- पूरी कविता में 28-28 मात्राओं की पंक्तियों का उपयोग हुआ है। टेक की पंक्ति 'सब बुझे दीपक जला लूँ' तथा 'आज दीपक राग गा लूँ!' में 14 मात्राएँ हैं।

बोध प्रश्न 1

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर संक्षेप में दें।

1. 'मैं नीर भरी दुख की बदली' कविता का मूल भाव क्या है

   .....

   .....

   .....

   .....

2. 'चिर सजग आँखें उनींदी' कविता में किस तरह का उद्‌बोधन है?

   .....

   .....

   .....

3. 'मिलन एकाकी/विरह में है दुकेला' से महादेवी का क्या भाव है?

.....

.....

.....

.....

4. 'सब बुझे दीपक जला लूँ' कविता में महादेवी का आत्मविश्वास किस रूप में प्रकट हुआ है ?

.....

.....

.....

.....

5. नीचे प्रश्न के साथ कुछ विकल्प दिए जा रहे है। उत्तर के लिए सही विकल्प को चिन्हित कीजिए।

i. 'मैं नीर भरी दुःख की बदली' शीर्षक कविता किस पुस्तक में है?

क) रश्मि ख) सांध्यगीत ग) नीरजा घ) दीप-शिखा

ii. 'चिर सजग आँखें उनींदी' किस काव्य-संग्रह की कविता है?

क) सांध्यगीत ख) नीहार ग) नीरजा घ) दीप-शिखा

iii. 'दुःख की बदली' में कौन-सा अलंकार है

क) उपमा ख) रूपक ग) रूपकातिशयोक्ति घ) उत्प्रेक्षा

iv. 'दुकूल' का क्या अर्थ है?

क) नदी का किनारा ख) क्षितिज ग) पौधा घ) दुपट्टा

v. 'उमड़ी कल थी मिट आज चली' किसके लिए कहा गया है?

क) स्त्री-पुरुष ख) भावना ग) बदली और स्त्री घ) अश्रुधारा

vi. 'दीप-शिखा' काव्य-संग्रह का प्रकाशन कब हुआ था ?

क) 1925 ख) 1942 ग) 1936 घ) 1932

vii. 'उपधान' शब्द का क्या अर्थ है ?

क) चादर ख) बिस्तर ग) खटिया घ) तकिया

viii. 'दुखव्रती निर्माण उन्मद' किसके लिए कहा गया है?

क) अमरता नापते पद ख) अन्य चरणों ग) नयन सूखे घ) आर्द्र चितवन

ix. 'सब बुझे दीपक जला लूँ' शीर्षक कविता किस पुस्तक में है

क) रश्मि ख) नीहार ग) नीरजा घ) दीप-शिखा

x. 'मैं नीर भरी दुख की बदली!' कविता में कितनी मात्रा की पंक्तियों का उपयोग हुआ है?

क) 12 ख) 14 ग) 16 घ) 18

xi. महादेवी वर्मा का जन्म कब हुआ था?

क) 1900 ख) 1911 ग) 1905 घ) 1907

xii. 'मसि-सागर' का अर्थ बताएँ ?

क) ढेर सारी स्याही ख) काला सागर ग) स्याही और समुद्र
घ) अँधेरे का समुद्र

xiii. महादेवी की कविताओं में किसकी प्रधानता है ?

क) शृंगार ख) वात्सल्य ग) प्रार्थना घ) उद्‌बोधन और प्रेरणा

xiv महादेवी वर्मा किस तरह की कवि मानी जाती हैं ?

क) हालावादी ख) प्रयोगवादी ग) रहस्यवादी घ) प्रगतिवादी

17.3 सारांश

इस इकाई में आपने छायावादी चतुष्टय की महत्वपूर्ण कवयित्री महादेवी वर्मा की पांच कविताओं का अध्ययन किया है। इन कविताओं के मूल प्रतिपाद्य को सारांश के रूप में क्रमशः इस प्रकार प्रस्तुत किया जा सकता है।

- 'पंथ होने दो अपरिचित' कविता में महादेवी प्रेरित कर रही हैं कि अपार दुःख में भी संघर्ष की इच्छा-शक्ति को नहीं छोड़ना चाहिए। विपरीत परिस्थितियों में भी कोशिश बंद नहीं करनी चाहिए।
- 'यह मंदिर का दीप' कविता कही है कि अपने काम को संकल्प की भावना के साथ करना चाहिए। प्रचार या प्रशंसा के लिए किया गया काम साधना की कोटि का नहीं होता है। साधकों के कारण ही यह दुनिया संकल्प पूरे कर पाती है।
- 'मैं नीर भरी दुःख की बदली' कविता में महादेवी वर्मा ने इस कविता में दो प्रकार का संदेश दिया है। एक यह कि स्त्री का जीवन दुःख से भरा हुआ है। दूसरा संदेश यह है कि उसका होना ही जीवन की सुंदरता को रचता है। अंत में यह भी कहा गया है कि परम्परा से स्त्री की बहुत उपेक्षा हुई है।
- 'चिर सजग आँखें उनींदी' कविता के माध्यम से महादेवी यह कहती हैं कि अपनी सजग चेतना को मंद मत होने देना। तुम्हारे रास्ते में न जाने कितनी तरह की बाधाएँ आएँगी। कुछ बाधाएँ सुंदर-मोहक रूप धारण करके आएँगी। इन सबको पहचानते हुए तुम्हें संघर्षरत रहना पड़ेगा।
- चारों ओर की समस्याओं से घिरा व्यक्ति प्रायः निराश हो जाता है। महादेवी कहती हैं कि उदासी के इस वातावरण में भी अपने छोटे-छोटे प्रयासों पर भरोसा करना चाहिए। रोमानी भाव से भी मन को मजबूती मिलती है।

17.4 उपयोगी पुस्तकें

1. महादेवी वर्मा : काव्य-कला और जीवन-दर्शन - सं.- शचीरानी गुर्टू, आत्माराम एंड सन्स, दरियागंज, दिल्ली
2. महादेवी वर्मा - जगदीश गुप्त, साहित्य अकादमी, नयी दिल्ली
3. महादेवी साहित्य (कुल 4 खंड) - सं. - निर्मला जैन, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली
4. महादेवी वर्मा की विश्वदृष्टि - तोमोको किकुचि, परमेश्वरी प्रकाशन, दिल्ली
5. छायावादी काव्य-कोश - कमलेश वर्मा, सुचिता वर्मा, द मर्जिनलाइज्ड पब्लिकेशन, इग्नू रोड, दिल्ली

17.5 बोध प्रश्नों /अभ्यासों के उत्तर

1. मैं नीर भरी दुख की बदली' कविता में महादेवी वर्मा ने कहा है कि स्त्री का जीवन दुःख से भरा हुआ तो है, मगर उसमें जीवन की सुंदरता और सम्भावना भी भरी हुई है। प्रकृति ने उसे संगीत और रंगों से भरपूर सजाया है, उसमें सृष्टि को आगे बढ़ाने की शक्ति दी है। यहीं यह बात भी सही है कि संसार ने उसे अधिकार-विहीन बनाया है। उसकी भूमिका को अलक्षित और अनुल्लिखित बनाने की पूरी कोशिश की गयी है।

2. 'चिर सजग आँखें उनींदी' कविता में महादेवी वर्मा ने प्रेरित करते हुए कहा है कि जाग्रत और सचेत रहो! किसी तरह के भ्रम में मत जिओ! किसी प्रलोभन में मत पड़ो! अपने प्रति किसी तरह की मोहासक्ति मत रखो! प्रकृति ने तुम्हें चिर सजग आँखें दी हैं। इन्हें सजग बनाए रखो! बाहरी बाधाएँ हमेशा आएँगी, भीतरी कमजोरी भी परेशान करेगी। तुम्हारा अपना व्यक्तित्व भी कभी-कभी तुम्हें बाँध लेगा। मगर, इन सबसे तुम्हें मुक्त होना है।

3. 'मिलन एकाकी/विरह में है दुकेला' से महादेवी कहना चाहती हैं कि वह मिलन मुझे अकेला कर देगा, क्योंकि संघर्ष की जिन प्रेरणाओं ने मेरे व्यक्तित्व का निर्माण किया है उन सबकी पूर्णाहुति इस मिलन में हो जाएगी। यह मिलन मेरे-तुम्हारे द्वैत को समाप्त कर देगा। द्वैत की समाप्ति मानो हमारे अस्तित्व-व्यक्तित्व को घुला-मिला लेने के समान है। इस तरह यह मिलन मुझे एकाकी हो जाने का एहसास कराएगा, जबकि विरह की स्थिति में मुझे एहसास है कि तुम भी हो और मैं भी हूँ। मेरे लिए मिलन में एकाकी हो जाने का भाव है और विरह में दोनों के अस्तिववान होने का भाव!

4. 'सब बुझे दीपक जला लूँ' कविता में महादेवी आत्मविश्वास-पूर्वक कहती हैं कि चाहे जितनी परेशानियाँ हों, मैं संघर्ष के लिए तैयार हूँ। वे प्रत्येक संघर्ष को आत्मबल के सहारे जारी रखना चाहती हैं। इस कविता में प्रतीकों के माध्यम से ढेर सारी कठिनाइयों का जिक्र किया गया है, जैसे-आँधी, तड़ित, मारुत आदि। इन सबसे लड़ने के लिए महादेवी जिन उपकरणों का उपयोग करती हैं, वे हैं - तृण, ऊँगलियों की ओट आदि। रोमानी शैली में वर्णित इन प्रकरणों में मुख्य बात यही है कि आत्मविश्वास बनाए रखना चाहिए। महादेवी यह भी कहती हैं कि मेरी मदद करने का अहसान मुझ पर मत लादना। मैं 'ज्वार' को ही नौका बना लूँगी।

5. i) क
   ii) क
   iii) ख
   iv) घ
   v) ग
   vi) ख
   vii) घ
   viii) क
   ix) घ
   x) ग
   xi) घ
   xii) घ
   xiii) ग
   xiv) ग